नाग और शबनम

नाग और शबनम

कृश्नचन्दर

प्रकाशक :

हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर (प्रा०) लिमिटेड,

हीराबाग • पो. बॉ. १९२२ • बम्बई-४

शाखा • व्रज भवन, दयानन्द रोड, २१ दरिया गंज • दिल्ली-६

प्रकाशक :

• यशोधर मोदी,
मैनेजिंग डायरेक्टर,
हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर (प्रा०) लिमिटेड,
हीराबाग, सी. पी. टैंक, पो. बॉ. ३६२२
बम्बई-४ • तार : हिन्दीप्रेमी

शाखा • व्रज भवन, दयानन्द रोड
२१ दरियागंज, दिल्ली-६

संस्करण :

१९७२

मूल्य पाँच रुपए

मुद्रक :

• ओमप्रकाश कपूर
ज्ञानमण्डल लिमिटेड,
कबीर चौरा,
वाराणसी-१

लेखक

कृश्नचन्दर आज के भारत की आत्मा की आवाज हैं। भारत और उसके निवासियों के सुख-दुःख के जितने सजीव और चुभते चित्रण उन्होंने किए हैं, उतने और किसी लेखक ने नहीं। उनकी कहानियाँ समाज और व्यक्ति के लिए नश्तर भी हैं और मरहम भी। उनकी ऐसी ही ताजा और दिलचस्प कहानियों का नवीन संकलन।

— प्रकाशक

कहानी

अनुक्रम :

दानी : १

करीम खाँ : २२

सहेली : ३१

लकड़ी के खोखे : ४१

ठण्डा कोठा : ५४

नाग और शबनम : ६५

आओ मरजाएं : ७२

मिस लोविट : ८८

बचन सिंह : १०४

काले पुल के वासी : ११६

दानी

दानी लम्बा और बदसूरत था। उसकी टाँगें और बाँहें [illegible] [illegible] में थे और बेहद खुरदरे थे। सुबह सवेरे चार्ल्स रोड के [illegible] नहाते हुए वह दूर से देखनेवालों को बिल्कुल भैंस का एक बच्चा मालूम होता था। उसके जिस्म में वाकई एक बैल की-सी ताकत थी। उसका सिर बड़ा, माथा चौड़ा और खोपड़ी बड़ी मजबूत थी। दिन भर वह चार्ल्स रोड के नाके पर ईरानी रेस्तराँ में बड़ी मुस्तैदी से काम करता और रात को ठर्रा पीकर एक भेड़े की तरह सिर नीचा करके हर किसी से कहता, "आओ, मेरे सिर से टक्कर मारो।"

मगर सब लोग हँसकर टाल दे जाते थे, क्योंकि दानी का सिर ही नहीं, उसका जिस्म भी बेहद मजबूत था और दो-तीन बार [illegible] और रोड गली के चन्द मनचले नौजवानों ने उसका चैलेंज कबूल करते हुए उसे मुकाबले पर देखा था और नतीजे में अपने सिर फुड़वा कर बैठ रहे थे। फिर किसी से हिम्मत न हुई कि दानी के सिर से टक्कर ले सके।

[illegible] दानी के सिर में हड्डी के सिवा कुछ न था। [illegible] दानी :

का गूदा होता, तो वह बा-आसानी थोड़ी सी अक्ल सर्फ़ करके बम्बई का दादा बन सकता था। उससे कम डील-डौल और ताकतवाले नौजवान अपने अपने इलाकों के बा-असर दादा बन चुके थे और गुंडों की पल्टनों पर हुकूमत करते थे। शराब स्मगल करते थे, सट्टा खेलाते थे, सिनेमा के टिकट ब्लैक में बेचते थे, रंडियों के कोठे चलाते थे और इलेक्शन के मौके पर अपने इलाके के वोट बेचते थे।

मगर शायद दानी की खोपड़ी में भेजा न था, क्योंकि उसे इस किस्म के तमाम कामों से उलझन-सी होती थी। जब कोई उसे इस किस्म का मशवरा देता, तो उसके चेहरे पर शदीद बेज़ारी झलक उठती और वह कहनेवाले की तरफ़ अपनी छोटी-छोटी आँखें और भी छोटी करके, होंठ भींच के, सिर झुका के, कन्धे सिकोड़ के एक हमला करने वाले मेंढे की तरह ख़तरनाक पोज़ लेकर कहता, "फिर ऐसा बोला, तो टक्कर मारूँगा!" और मशवरा देनेवाला खिसिया कर या हँस कर परे हट जाता।

दानी को पढ़ने से नफ़रत थी। वह तालीमयाफ़्ता आदमियों को बड़ी हिकारत से देखता था। दानी को शोहरत से नफ़रत थी। जब कभी किसी बड़े मशहूर आदमी का जलूस चार्च चौक से गुज़रता और उस अज़ीम उश्शान हस्ती को फूलों से लदे हुए, एक खुली कार में बैठे हुए, दुतरफ़ा खड़े हुजूम की सलामें लेता हुआ देखता, तो कहता, "वाह, क्या सजा हुआ मेंढा है! इससे पूछो, मेरे सिर से टक्कर लेगा!"

वाकई ज़रा गौर करो, तो सिर्फ़ जंगे आज़ादी के दिनों में दुबले-पतले लीडर आते थे। आजकल ज्यों-ज्यों आम लोगों की हालत पतली होती जाती है, लीडर मोटे होते जाते हैं। वे इस कदर भारी-भरकम और मोटे-ताज़े पाये जाते हैं आजकल कि उनपर बा-आसानी किसी मेंढे या नागौरी बैल का शुबा किया जा सकता है।

दानी को सियासत से भी सख्त नफरत थी। ऊँची सियासत तो खैर उसके पल्ले ही न पड़ती थी, लेकिन वह जो एक सियासत होती है, गली महल्ले, बाजार और रेस्तराँ की, वह भी उसकी समझ में न आती थी। बस, उसे सिर्फ काम करना पसन्द था। रेस्तराँ का मालिक उससे दिन में बारह घंटे काम लेता था, हालाँकि दानी लगातार सोलह घंटे काम करने के लिए तैयार था, मगर रेस्तराँ का मालिक भी क्या करे, वह कानून के हाथों मजबूर था और दानी अपनी फितरत के हाथों। इसलिए वह सुबह-सवेरे सबसे पहले रेस्तराँ में आता और सब नौकरों के बाद जाता और दिनभर खड़े-खड़े रहकर इन्तहाई चौकसी से सब काम सबसे पहले करता और जब रेस्तराँ बन्द हो जाता और दिनभर की मशक्कत से भी दानी का जिस्म न थकता, तो वह इन्तहाई बेजार होकर ठर्रा पी लेता और फुटपाथ पर खड़ा होकर अपने दोस्तों से टक्कर लड़ाने को कहता और जब कोई तैयार न होता, तो वह मायूस होकर अपना बदन ढीला छोड़ देता और फुटपाथ पर गिरकर सो जाता। बस, यही उसकी जिन्दगी थी।

कमोबेश यही उसके दूसरे साथियों की जिन्दगी थी, जो उसके साथ रेस्तराँ में काम करते थे और उसी फुटपाथ पर सोते थे, जो चार्क चौक के रेस्तराँ के बिलकुल सामने सड़क पार करके चार्क चर्च के सामने फैला है। चार्क चर्च के छोटे-से मैदान में एक तरफ नीले पत्थरों का बना हुआ एक खूबसूरत ग्राटो है, जिसमें पवित्र माँ का बुत है। एक तरफ गुलमुहर के दो पेड़ हैं, जिनका साया दिन में फुटपाथ के उस हिस्से को ठंडा रखता है। उन पेड़ों की छाँव में गरीब ईसाई मोमी शमाएँ, ईसा मसीह और मरियम के मोमी बुत और गेंदे के हार बेचते नजर आते हैं। दो भिखारी दिन में भीख माँगते हैं और रात को कहीं गायब हो जाते हैं। फुटपाथ पर सड़क के किनारे छते हुए बस स्टाप हैं, जहाँ बस का

क्यू लगानेवालों के अलावा आस-पास के नौजवानों का भी मजमा रहता है, क्योंकि बस स्टाप मुसाफिरों के वेटिंगरूम ही नहीं, आशिक़ों के मुलाक़ात-घर भी हैं। *'पाँच बजे डी स्टाप पर मिल जाना !'* रोज़ी गिरजा से निकलते हुए चोर निगाहों से अपने आशिक़ विक्टर को देखती हुई आहिस्ता से कहती है और फिर अपनी खौफ़नाक अम्मा के साथ पसरा कर आगे बढ़ जाती है और फिर विक्टर या जेम्स या चार्ल्स धड़कते हुए दिल से और बेचैन निगाहों से कभी घड़ी देखता हुआ, कभी अपनी पेटी कसता हुआ रोज़ी का इन्तज़ार करता है, साढ़े चार बजे ही से, और देखता है कि जोसफ़ अपनी डेज़ी को लेकर गया और टाम अपनी इज़ाबेल को लेकर भागा और शीला फौजासिंह के साथ चली गयी। इस साली शीला को कोई ईसाई पसन्द ही नहीं आता ! ब्लडी डोट और वह लाउ भी गयी उस यहूदी छोकरे के साथ, जिसका जाने क्या नाम है, लेकिन जो हर रोज पाँच बजे अपनी मोटर साइकिल यहीं खड़ी करता है। अब साढ़े पाँच हो गये, अब पौने-छः हो गये, अब अगर रोज़ी नहीं आयी, तो वे लोग 'गन आफ़ नवारो' नहीं देख सकते और उसके दोनों टिकट बेकार जाएँगे। अब वह अकेला 'गन आफ़ नवारो' देख कर क्या करेगा ! 'सन आफ़ ए गन !' छः बज गये, रोज़ी नहीं आयी। वह नहीं आएगी। शायद वह फ़ान्सिस के साथ चली गयी, जिसके साथ उसकी माँ उसकी शादी करना चाहती है। ब्लडी स्वाइन ! वह फ़ान्सिस को गोली मार देगा, वह रोज़ी को भी गोली मार देगा और उसकी मनहूस माँ को, जो हर वक़्त साये की तरह रोज़ी के साथ लगी रहती है, वह बरबादाने ज़िन्दगी के हर शख़्स को गोली मार देगा और फिर ख़ुद भी गोली मार कर मर जाएगा।

एकाएक विक्टर ने रोज़ी को मार्टेन्स पार्क में घूमने की एक शाम की तरह झुकते देखा और उसके दिल में गोली मारने का ख़याल एकदम

निकल गया और उसका चेहरा खुशी से खिल उठा और वह बेइख्तियार रोजी की तरफ भागा और भागते-भागते एक दौड़ती हुई लारी के नीचे आने से एकाएक किसी गैबी ताकत की बदौलत बच गया। रोजी के मुँह से खौफ की एक चीख निकली, मगर दूसरे लमहे में विक्टर का हाथ उसकी कमर में था और वह उसे दौड़ाते हुए लारियों, गाड़ियों, बसों, टैक्सियों की भीड़ से निकलते हुए डी बस के स्टाप पर ले गया। बस चल चुकी थी, मगर दोनों ने दौड़ कर उसे पकड़ लिया—पहले विक्टर ने पकड़ा फिर उसने हाथ का जोर का झटका देकर रोजी को ऊपर खींच लिया। चन्द लमहों के लिए रोजी का लेमन रंग फ्राक का गोल घेरा तमाशाइयों की निगाहों में घूमा, फिर वे दोनों फूली हुई साँसों में हँसते हुए एक-दूसरे को बाजू से पकड़े हुए डी बस की ऊपर की मंजिल में चले गये, जहाँ से आसमान नजर आता है और हवा ताजा होती है और नीचे सड़क पर मर्द, औरतें, बच्चे संगीत के सुरों की तरह बिखरते हुए दिखाई देते हैं। कौन कहता है, मुहब्बत करने के लिए पहलगाम, नैनीताल या दार्जिलिंग जाना जरूरी है? मुहब्बत करनेवाले तो किसी बस स्टाप पर खड़े होकर भी अपनी जान पर खेल कर मुहब्बत कर जाते हैं।

मगर दानी को औरतों से भी दिलचस्पी न थी, इसलिए जिस रात उसने मरिया को गुण्डों के हाथों से बचाया, उसके दिल में मरिया से या किसी औरत से भी मुहब्बत करने का कोई ख्याल तक पैदा न हुआ था। पीछे मुड़ कर दूर-दूर तक जब वह नजर डालता, तो उसे अपनी जिन्दगी में कोई औरत दिखाई न देती। बहुत दूर बचपन में उसे एक जर्द घायल मायूस चेहरा दिखाई दिया था, जिसने उसे एक होटेल से बाहर निकाल कर उसके चचा के हवाले कर दिया था। इससे ज्यादा उसके दिल में अपनी माँ की कोई याद न थी। फिर उसके जहन में एक खौफनाक चची की सूरत थी, जो मुतवातिर चार बरस तक उसे पीटती

रही थी। जरा बड़ा होने पर वह फौरन ही अपनी चची के घर से भाग खड़ा हुआ था और तब से वह आजाद था। मगर हमेशा वह अपनी भूख के हाथों आजिज रहा। उसे बहुत भूख लगती थी। इसी वजह से उसकी माँ ने उसे उसके चचा के हवाले कर दिया था, क्योंकि वह फाकों से अपने बेटे का पेट नहीं भर सकती थी। और आज दानी सोच सकता था कि उसकी चची भी कोई ना-मेहरबान औरत न थी, हरगिज कोई जालिम औरत न थी, मगर उसके अपने पाँच बच्चे थे और दानी की भूख इतनी लम्बी-चौड़ी, जइयद और मजबूत, बुलन्द और राक्षसी थी कि चची ने उसके बार-बार खाना माँगने पर मजबूर होकर उसे पीटना शुरू कर दिया था। वह दानी को नहीं पीटती थी, उसकी भूख को पीटती थी। और आज भी कितनी ही बीवियाँ और शौहर और माँएँ और बेटे और बहुएँ और ननदें और भावजें और चचेरे भाई और मौसेरे भाई और दोस्त और यार और दिल के प्यारे और जिगर के टुकड़े हैं, जो इसी भूख की खातिर एक-दूसरे को पीटते हैं, धोखा देते हैं, बेवफाई करते हैं, जान लेते हैं, फाँसी पर चढ़ जाते हैं, मगर कोई उस जालिम राक्षसी खौफनाक भूख को फाँसी नहीं देता, जिसके मनहूस वजूद से इस दुनिया में कोई इनसान रिश्ता और कोई तहजीब कायम नहीं है।

दानी यहाँ तक तो न सोच सकता था, लेकिन वह जब भी सोचने की कोशिश करता था, उसके जहन में एक बहुत बड़ी खौफनाक भूख का ख्याल आता था, जिसकी वजह से उसकी माँने तंग आके उसे उसके चचा के हवाले कर दिया, जिसकी वजह से उसकी चची उसे दिन रात चार साल तक मारती-पीटती रही और जिसकी वजह से वह आगे जाकर अपनी जिन्दगी में बार-बार मुख्तलिफ हाथों से पिटा और मुख्तलिफ घरों से निकाला गया। इसलिए उसके जहन में औरत की मुहब्बत, बाप की मेहरबानी, दोस्त की जाँ-निसारी, किसी का कोई एहसास न था। एक

जन्म-जन्मान्तर से भूखी-प्यासी भूख का एहसास था, जो बचपन से जवानी तक उसके साथ चला आया था। चूँकि उसका बदन दूसरों से दुगना लम्बा और बड़ा था, इसलिए वह दूसरों के मुकाबले में दुगुनी खूराक चाहता था। दानी को जिन्दगी भर एक ही अरमान रहा—कोई उसे पेट भर कर खाना दे दे और फिर चाहे उससे चौबीस घंटे मशक्कत कराये। मगर दानी का यह ख्वाब मार्क रोड के ईरानी रेस्तराँ में आके ही पूरा हुआ। ईरानी रेस्तराँ का मालिक उससे चार आदमियों के बराबर मशक्कत कराता था, मगर पेट भर के खाना देता था और बीस रुपये तनख्वाह देता था, जिससे दानी ठर्रा पीता था और पेट भर के, खाना खाके और ठर्रा पीके वह फुटपाथ पर सो जाता था और अब उसे दौलत, सियासत और शोहरत और औरत वगैरह-वगैरह किसी चीज की परवा न थी। अब वह दुनिया का खुशकिस्मत तरीन जिन्दा इनसान था।

जिस रात सरिया को उसने गुण्डों के हाथों से बचाया, उस समय भी उसके दोस्त अली अकबर ने उसे बहुत मना किया था। तीन-चार गुण्डे मिल के सरिया को एक टैक्सी में घुसाने की कोशिश कर रहे थे, जो चर्च के लोहे के जंगले से बाहर फुटपाथ के किनारे खड़ी थी। चौक का सिपाही ऐसे मौके पर कहीं गश्त लगाने चला गया था, जैसा कि ऐसे मौके पर अक्सर होता है। सरिया खौफ और दहशत से चिल्ला रही थी और मदद के लिए पुकार रही थी और अली अकबर ने दानी को बहुत समझाया था, 'यह बम्बई है, ऐसे मौकों पर यहाँ कोई किसी की मदद नहीं करता। ऐसे मौके पर सब लोग कान लपेट कर सो जाते हैं। तुम भी सो जाओ। हिमाकत मत करो।' मगर दानी अपने कानों में उंगलियाँ देने के बावजूद सरिया की चीखों की ताब न ला सका और अपनी जगह से उठ कर टैक्सी की जानिब भागा। गुण्डों के करीब जाके उसने उनसे कोई बातचीत नहीं की। उसने सिर नीचा करके एक गुण्डे के

सिर में टक्कर मारी, फिर दूसरे के, फिर पलट के तीसरे के। अगले चन्द लमहों में तीनों गुण्डे फर्श पर पड़े थे और उनके सिर फट गये थे। फिर पलट के दानी ने चौथे गुण्डे की तरफ देखा, तो वह जल्दी से सरिया को फुटपाथ पर छोड़ के टैक्सी के अन्दर कूद गया और टैक्सीवाले ने गाड़ी स्टार्ट करके यह जा वह जा। दानी मेंढे की तरह सिर नीचा कर के टैक्सी के पीछे भागा, मगर मोटर का मेंढा बहुत तेज रफ्तार होता है, इसलिए दानी मायूस होकर पलट आया और वापस आकर सरिया से पूछने लगा :

"ये लोग कौन थे?"

"एक तो मेरा भाई था," सरिया ने झिझकते झिझकते कहा।

"तुम्हारा भाई था?" दानी ने पूछा।

"हाँ," सरिया ने सिर हिलाके कहा, "वह मुझे इन गुण्डों के हाथ फरोख्त कर रहा था।"

"कितने रुपयों में?" दानी ने पूछा।

"तीन सौ रुपयों में," सरिया ने जवाब दिया।

"फिर?"

"फिर मैं नहीं मानी," सरिया बोली।

"तुम क्यों नहीं मानीं?"

"मैं छः सौ माँगती थी।"

"तुम छः सौ माँगती थीं?" दानी ने हैरत से पूछा, "वह क्यों?"

"मेरा भाई तीन सौ रुपये ले जाता, तो मुझे क्या मिलता? मैं भी [illegible] थी, तो मुझे भी कुछ मिलना चाहिए था," सरिया ने दानी को समझाया।

दानी जोर से हँस के बोला, "वाह! यह चीज भी आती है, इसे क्या कहते हैं? ऐसा कमाल तो हमने जिन्दगी में कभी नहीं देखा, न सुना।

हमारी दुकान से जो ग्राहक चार आने का खारा बिस्कुट खरीदता है, उसे चार आने के एवज खारा बिस्कुट मिलता है, दूकानदार को चार आना मिलता है, मगर खारा बिस्कुट को क्या मिलता है ? ऐं ?"

"मैं खारा बिस्कुट नहीं हूँ," सरिया गुस्से से बोली !

दानी ने सरिया को सिर से पाँव तक देखा—जवान और तेज और तीखी और नुकीली और साँवली। बोला, "मगर बिल्कुल खारे बिस्कुट की तरह लगती हो !"

सरिया मुसकरायी, कुछ शरमायी। अगर वह साड़ी पहने होती, तो जरूर इस वक्त उसका पल्लू अपने सीने पर ले लेती, ऐसे मौकों पर औरतों की यह एक पेटेंट अदा होती है, मगर उस बेचारी ने तो महज स्कर्ट के ऊपर एक स्याह ब्लाउज पहन रखा था, इसलिए उसने सिर्फ गरदन झुकाना ही काफी समझा।

दानी पलटकर फुटपाथ पर अपनी जगह पर आ गया और बोला, "अच्छा, अब जाओ, कहीं दफा हो जाओ।"

सरिया ने उसके पीछे-पीछे आते हुए कहा, "मुझे भूख लगी है।"

ईरानी का रेस्तराँ तो बन्द हो चुका था, इसलिए दानी उसके लिए डोरा गली के एक चायखाने से चाय, पाव और आमलेट उधार पर लाया और जिस तरह से सरिया ने उसे खाया, उससे मालूम होता था कि उसकी भूख में भी दानी का स्टाइल झलकता है। दो लुकमों में वह चार स्लाइस खा गयी, एक लुकमे में आमलेट। फिर उसने एक ही घूँट में सारी चाय अपने हलक से नीचे उतार दी। दानी उसकी इस हरकत पर बेहद खुश हुआ। यकायक उसे ऐसा महसूस हुआ, जैसे उसे एक जिगरी दोस्त मिल गया हो। बोला, "तुम्हें बहुत भूख लगती है !"

"तुम्हारा नाम क्या है ?" दानीने अब पहली बार उससे उसका नाम पूछा।

"सरिया ! यानी सुगन्ना !" सरिया झिझकते झिझकते बोली।

"मैं दानी हूँ।" दानीने अपने सीनेपर उँगली रखते हुए कहा, "यानी डैनियल !"

फिर वे दोनों हैरत से एक-दूसरेको देखने लगे और यकायक पहली बार उन्हें आसमान बहुत साफ दिखाई दिया और दूर समन्दर से लहरों की सदा आने लगी और मीठी दिल-गुदाज रात गुलमुहर के फूल पहने उनके तरसे हुए जिस्मोंके करीब से गुजरती गयी…।

° ° °

रोज रात को फुटपाथ पर दानी और सरिया का झगड़ा होता था, क्योंकि दानी ने सरिया को ईरानी रेस्तराँ के किचन में नौकर करा दिया था। पहले उसने कई दिनों तक सरिया को फुटपाथ से भगाने की कोशिश की। वह मेंढे की तरह सिर झुकाये जब सरिया की जानिब दख करता, तो सरिया वहाँ से भाग जाती और दानी के सो जाने के बाद वापस उसी फुटपाथ पर चली आती और हौले-हौले उसके पाँव दाबने लगती और जब सुबह-सवेरे दानी उठता, तो उसे अपना बदन बहुत हलका और उम्दा और मजबूत मालूम होता और वह देखता, किसीने उसकी बनियान धो दी है और कमीज और पतलून भी, तो पहली बार उसे जिन्दगी में ऐसा मालूम हुआ, जैसे वह अपने घर में आ गया हो। पहली बार उसने सरिया की उँगलियों को एक अजीब अनोखे अन्दाज में देखा। वह देर तक उसके हाथ पर अपना हाथ फेरता रहा। फिर रातों को उसे फुटपाथ पर अपना बिस्तर और तकिया लगा हुआ मिलने लगा और वह जगह भी साफ-सुथरी और रोजाना की झाड़-पोंछ से चमकती हुई महसूस होने लगी, जहाँ वह हर रोज सोता था। और वह सरिया के

वजूद का आदी होता गया। मगर अब भी हर रोज खाने के वक्त रातको फुटपाथ पर दोनों की लड़ाई होती थी, क्योंकि सरिया भी बहुत खाती थी और दानी भी। दोनों रातका खाना रेस्तराँ से ले आते थे और मिल-कर खाते थे और दोनों की कोशिश यह होती थी कि कौन किससे ज्यादा खाता है। अक्सर औकात दानी कामयाब रहता था, लेकिन जिस दिन सरिया ज्यादा खाने में कामयाब हो जाती थी, उस दिन वह दानी के हाथों जरूर पिटती थी।

एक दिन सरिया ने दानी से कहा, "अब तुम मुझे मत पीटा करो।"

"क्यों?"

"क्योंकि अब मुझे खूराक की ज्यादा जरूरत है।"

"क्यों?"

"क्योंकि अब मेरे बच्चा होनेवाला है।" सरिया ने उसे समझाया।

दानी ने यकायक खाते-खाते हाथ खींच लिया और हैरत से सरिया को सिर से पाँव तक देखने लगा, फिर बोला, "बच्चा!"

"हाँ", सरिया खुश होकर बोली।

"वह भी खायेगा?" दानी की आवाज में खुशी के साथ-साथ [illegible]ी-सी मायूसी भी थी।

"हाँ, वह भी खायेगा।" सरिया ने उसे समझाया, "पहले तो मैं [illegible] थी, अब दो हूँ—एक मैं, एक मेरा बच्चा—तुम्हारा बच्चा—[illegible]में। अब हम दो हैं। हम दोनों को ज्यादा रोटी मिलनी चाहिए।"

दानी ने अपने सामने फर्श पर पड़े हुए कागज के टुकड़े पर रखे [illegible]ने को देखा, फिर उसने सरिया को देखा, फिर उसने अपना मुँह बड़ी [illegible]ती से बन्द किया और दोनों जबड़ों को मिलाकर इस तरह की जुम्बिश [illegible], जैसे वह मायूसी का एक बहुत बड़ा लुकमा निगलने जा रहा हो। [illegible]र उसने आहिस्ता से कागज का टुकड़ा सरिया की जानिब बढ़ाकर [illegible]नी :

कहा, "लो, खाओ।"

"नहीं, तुम भी खाओ। तुमने तो कुछ खाया ही नहीं।" सरिया बोली।

"नहीं, पहले तुम खाओ। बाद में जो बचेगा, वह मैं खा लूँगा," दानी ने एक अजीब मुलायमतसे कहा।

पहले दिन तो सरिया सब चट कर गयी, इस जोर की भूख लगी थी उसे। दूसरे दिन उसने कुछ थोड़ा-सा छोड़ा दानी के लिए। फिर वह आहिस्ता-आहिस्ता दानी के लिए ज्यादा खाना छोड़ने लगी। फिर भी जो बाकी बचता था, वह दानी के लिए इस कदर कम होता था कि उसकी आधी भूख प्यासी ही रह जाती थी, लेकिन अब उसने खाली पेट या आधे पेट रात को भूखे सो जाना सीख लिया था। पुरानी आदत को वापस बुलाना इस कदर मुश्किल नहीं होता, जिस कदर नयी आदत को पालना। होले-होले उसने शराब पीना छोड़ दिया, क्योंकि बच्चे को खुराक चाहिए और कपड़े भी। और सरिया ने अभी से अपने बच्चे के लिए कपड़े सीने शुरू कर दिये थे—छोटे-से मुन्ने से गुड्डे के कपड़े! रंगदार और मुलायम और रेशमी, जिस पर हाथ फेरने से दानी के जिस्म और रूह में खुशियों की फुरेरियाँ-सी घूमने लगती थीं। 'हमें ज्यादा से ज्यादा बचाना चाहिए'—कई दिनों के सोच-विचार के बाद दानी इस नतीजे पर पहुँचा।

रात के बारह बजे थे और वे दोनों फुटपाथ पर एक दूसरे के करीब लेटे थे और सरगोशियों में बातें कर रहे थे।

"मुझे अपने बचपन और लड़कपन का कोई दिन ऐसा याद नहीं आता, जिस दिन मैं भूखा नहीं रहा," दानी बोला।

"मैं कोई रात ऐसी याद नहीं कर सकती, जब मैं खाना चुराने के इलजाम में न पिटी होऊँ," सरिया बोली।

"मगर हमारा बच्चा भूखा नहीं रहेगा।" दानी ने फैसलाकुन लहजे में कहा।

"उसके पास सब कुछ होगा," सरिया ने पुरउम्मीद लहजे में कहा।

"पेट भरने के लिए रोटी, तन ढकने के लिए कपड़ा," दानी ख्वाबनाक लहजे में बोला।

"और रहने के लिए घर।"

"घर!" दानी ने चौंक कर पूछा।

"क्या अपने बच्चे को घर न दोगे?" सरिया ने शिकायत के लहजे में पूछा, "क्या वह इसी फुटपाथ पर रहेगा?"

"मगर घर कैसे मिल सकता है?" दानी ने पूछा।

"मैंने सब मालूम कर लिया है।" सरिया ने समझाया, "चर्च के पीछे नूरा मैन्दान बन रही है। उसमें पाँच कमरेवाले फ्लैट होंगे और चार कमरेवाले और तीन कमरेवाले और दो कमरेवाले और दस फ्लैट एक कमरेवाले भी होंगे, जिनका किराया सत्रह रुपये होगा और पगड़ी सात सौ रुपये।"

"मगर सात सौ रुपये हम कहाँसे देंगे?" दानी ने पूछा।

"अब तुमको सेठ तीस रुपये देता है, मुझको पच्चीस। अगर हम हर महीने पचास रुपये नूरा मैन्दान के मालिक को दें, तो चौदह महीने में एक कमरे का फ्लैट हमको मिल सकता है।"

बहुत देर तक दानी सोचता रहा। सरिया का हाथ दानी के हाथ में था। यकायक दानी को ऐसा महसूस हुआ, जैसे उसके हाथ में एक नन्हें बच्चे का हाथ भी आ गया है। उसका दिल अजीब तरीके से पिघलने लगा, घुलने लगा। उसकी आँखों में खुद-बखुद आँसू आ गये और उसने अपनी भीगी हुई आँखें सरिया के हाथ की पुश्त पर रख दी और रुँधे हुए गले से बोला, "हाँ, मेरे बच्चे का घर होगा, जरूर होगा,

मैं सोचता हूँ, सरिया! मैं तीन घंटे के लिए ईरानी के छापखाने में रात के ग्यारह बजे से दो बजे तक काम कर लूँ। तब तो अपना रेस्तराँ भी बन्द हो जाता है—ग्यारह बजे। फिर ग्यारह बजे से दो बजे तक छापखाने में काम करने में क्या हर्ज है? उस छापखाने का सेठ दस रुपये पगार देनेको बोलता था, मगर मेरे ख्याल में वह बारह-पन्द्रह रुपये तक दे देगा।"

"तब तो हम जल्दी घर ले सकेंगे," सरिया ने खुश होकर कहा। "और अगर ईरानी सेठ उधार दे दे, तो शायद अपने घर पर ही बच्चा पैदा होगा।"

दानी का चेहरा खुशियाँ बिखेरती उम्मीद की रोशनी से चमकने लगा। यकायक वह सरिया का हाथ ज़ोर से दबाकर बोला, "आओ, दुआ करें।"

वे दोनों उठकर गिरजा के फौलादी जंगले को पकड़ कर दो-ज़ानू हो गये। लोहे के जालीदार सलाखों के दरमियान गिरजा के लम्बे-चौड़े सहन के बीच ईसा मसीह का बुत सलीब पर लटका था और एक तरफ़ नीले पत्थरों के ब्लू ग्राटो में मरियम ने पवित्र बच्चे को गोद में उठा रखा था और ग्राटो में मोमी शमएँ रोशन थीं और गुल्मुहर की नाज़ुक पत्तियाँ हवा के झोंकों से टूट-टूट कर ग्राटो के चारों तरफ़ गिर रही थीं और मुकद्दस मरियम की गोद में एक छोटा-सा बच्चा था, जैसा बच्चा हर माँ के तसव्वुर में होता है, और यह रात मरियम के लबादे की तरह मेहरबान थी और किसी नींद में डूबे हुए ईसा के ख्वाब की तरह मासूम··· ।

दुआ पढ़कर दानी ने सरिया से पूछा, "यह पादरी आज बार-बार अपने उपदेश में आज़ादी, रोटी और कल्चर की बात कर रहा था। आज़ादी और रोटी तो खैर समझ में आती हैं, मगर यह कल्चर

क्या है !"

"मेरे ख्याल मे कोई मीठा केक होगा," सरिया सोच कर बोली।

"और वह दुनिया मे अमन की बात भी करता था।" दानी बोला, "मगर हमेशा तो मेरे पेट में ऐसी जंग होती है कि समझ मे नही आता, यह पेट की जंग कैसे बन्द होगी ! ओ खुदा, कैसी भयानक जंग होती है मेरे पेट में !"

"मैं जानती हूँ, मेरी माँ भी जानती थी, मेरी बहनें भी, मेरे भाई भी और हम सबका बाप भी।" सरिया अफ़सोस भरे लहजे में बोली, "और मेरे बाप का बाप भी···बेचारा बुड्ढा ! कोई रिश्ता हमसे इस कदर करीब नहीं रहा, जिस कदर भूख का··· !"

"खुदा करे, *हमारा बेटा भूखा न रहे।*"

"पेट में अमन और दुनिया मे अमन, जैसा कि वह पादरी कहता था। आमीन !"

* * *

एक दिन सरिया जिस तरह अचानक आयी थी, उसी तरह से वहाँ से चली गयी। खबर सुनते ही दानी भागा-भागा रात के डेढ़ बजे डोरा गली के चाय खाने से अपनी फ़ुटपाथ पर आया, तो उसने देखा कि लोगों का एक बड़ा जमघट है और पुलिस के बहुत-से सिपाही सड़क पर और फ़ुटपाथ के आस-पास खड़े हैं और एक ट्रक फ़ुटपाथ पर चढ़ी हुई है और उसका इंजिन गिरजा के दाहिने जंगले को मोड़ता हुआ गुल-मुहर के पेड़ से टकरा गया है। पिछले पहियों के पास सरिया और अली अकबर की लाशें रखी हैं, क्योंकि यही दो लोग फ़ुटपाथ पर सोये हुए ट्रक की जद मे आये थे। अगर दानी भी सोया होता, तो उस वक्त उसकी लाश भी यहीं पड़ी होती। कभी-कभी रात की तारीकी मे तेजी से गुजरती हुई या एक-दूसरी से रेस करती हुई ट्रकें फ़ुटपाथ पर चढ़ जाती

है। वह शहरों में अक्सर ऐसा होता रहता है।

दानी एक अहमक की तरह ख़ून में लथपथ मरियम की लाश पर झुका रहा, फिर वह फटी फटी निगाहों से मजमे की तरफ़ देखने लगा और काँपते हुए लहजे में कहने लगा, "मगर अभी तो यह ज़िन्दा थी। दो घंटे पहले उसने और मैंने इसी जगह पर खाना खाया था। यह बिल्कुल ज़िन्दा और तन्दुरुस्त थी। उसकी उम्र सिर्फ़ सत्रह साल थी। उसके पेट में मेरा बच्चा था—छः महीने का बच्चा! मेरा बच्चा! किसने मारा उन्हें?"

यकायक दानी दोनों हाथों की मुट्ठियाँ कसते हुए ज़ोर से चीखा। एक तमाशाई ने ट्रक की तरफ़ इशारा किया। फौरन पुलिस के सन्तरियों ने दानी को पकड़ा, मगर उसने घूँसे मार कर दोनों सन्तरियों से अपने आपको आजाद करा लिया। इस अरसे में दोनों सन्तरी उसे कशमकश करते हुए उसे सड़क से दूर घसीट कर ले गये थे। दानी उनसे आजाद होकर ट्रक की जानिब लपका। उसकी आँखें सुर्ख हो गयीं। बदन झुक गया और फिर एक मेंढे की तरह तन गया। उसके होंठों से जानवरनुमा इक भिंची हुई-सी गुर्राहट निकली। वह अपने सर को एक खौफनाक तरीके से आगे बढ़ाये और झुकाये तेजी से ट्रक पर हमलावर हो गया।

o o o

पूरे छः माह वह अस्पताल में रहा, उसका सिर खुल गया था। वह बच तो गया था, मगर उसके दिमाग का एक हिस्सा तकरीबन नाकारा हो चुका था और अब उसका सिर एक पेंडुलम की तरह हौले हौले आप-ही-आप हिलता था और उसका वहशी मेंढे की तरह पला हुआ मजबूत जिस्म सूखे बाँस की तरह दुबला हो गया था। उसे बहुत कुछ याद था और बहुत कुछ याद नहीं भी था और वह को

के घर का नक्शा [illegible] एक बहुत बड़ा मकान मालूम हुआ।

दूसरे दिन दानो बड़ी लगन से पलस्तर पर बनाने में मसरूफ नज़र आया। कभी वो यह तीन ईंट ऊपर लगाता था और अब वह एक ईंट पर दूसरी ईंट रखकर उसपर तीसरी ईंट टिकाने में मसरूफ था कि कासिम ने उससे पूछा, "दानो, यह कितना बड़ा घर होगा?"

दानो की आँखें खुशी से चमकने लगीं।

"यह एक बहुत बड़ा घर होगा।" वह बोला, "और मैंने तैय किया है कि मैं इसे चर्नी रोड के ठेठ बीच में तामीर करूँगा। इसके दस माले होंगे। हर माले में बीस फ्लैट होंगे। हर फ्लैट में तीन कमरे होंगे...।"

"तीन कमरे किसके लिए?" गोपी ठेलेवाले ने पूछा।

"एक मियाँ के लिए, एक बीवी के लिए, एक बच्चे के लिए।"

"मुझे इस घर में जगह दोगे?" रामू हज्जाम ने पूछा, "मेरी बीवी है, मेरे दो बच्चे हैं और ये तीनों मेरे गाँव में हैं, क्योंकि यहाँ मेरे पास कोई घर नहीं है।"

"और मेरी माँ बूढ़ी है।" गोपी बोला, "और मेरे पास कोई काम नहीं है सिवा जेब काटने के। मैं तीन दफा जेल काट चुका हूँ। मुझे तुम अपने घर का चौकीदार रख लेना और रहने के लिए सिर्फ एक कमरा दे देना।"

"यह एक बहुत बड़ा घर होगा।" दानो इन्तिहाई मासूमियत से बोला और शिद्दते-जज़्बात से उसकी चमकती हुई आँखें बाहर निकली पड़ती थीं। "और उसमें तुम सबके लिए जगह होगी—कासिम के लिए और रामू के लिए और गोपी के लिए और धीरज के लिए और बसन्त के लिए और पाटिल के लिए और रंगाचारी के लिए और थागो लेन और डोरागली के फुटपाथ पर सोनेवालों के लिए ही जगह होगी। मेरा ख्याल

था, जितना किसी बेघर का ख्याल हो सकता है।

और फिर जब कई माह की दौड़ धूप के बाद वह घर मुकम्म गया, तो रात के ग्यारह बजे से एक बजे तक दानी टीन का एक पीटते हुए पार्क गेट के दोनों फुटपाथ और थागो लेन के फुटपाथ डोरागली बल्कि खास बाजार और नेगर पार्क तक के फुटपाथि इस नये घर में आने की दावत देता फिरा। जाहिर है, उसके पास तीन ईंटें थीं। मगर अब उसने इन तीन ईंटों को पार्क चौक के आइलैंड के अन्दर रख दिया था और इस तरह अपना महल तामी लिया था और अब वह सारे फुटपाथियों को अपने बीवी-बच्चों समे में आने की दावत दे रहा था।

डोरागली के पाटिल ने उसे रोक कर कहा, "लेकिन मेरे तो बच्चे हैं और हम सबके सब इस खुले फुटपाथ पर बड़े आराम से हैं, तुम्हारे तीन कमरोंवाले फ्लैट से हमारा क्या होगा?"

"मैं तुम्हें सात कमरोंवाला फ्लैट दूँगा," दानी ने टीन पीटते चिल्ला कर कहा।

"कब आयें हम लोग?" पाटिल की बीवी ने अपनी मुसकराहट साड़ी के पल्लू में छिपाकर उससे पूछा। उसकी हँसी रोके रुकती थी।

"कल सुबह जब सरिया बच्चे को लेकर मैके से आ जाए मैं अपने घर के दरवाजे सब लोगों के लिए खोल दूँगा। दरवाजे पर होगा और रंगारंग झंडियाँ होंगी और बन्दनवारें और मैं पादरी घरके मुहूर्त के लिए बुलाऊँगा और वह बाइबिल सुनाएगा और गिरजे घंटे बजेंगे और उस वक्त तुम सब लोग मेरे घर में दाखिल होगे'''।"

दानीकी काँपती हुई आवाज में इन्तिहाई खुलूस था। उस दुबला चेहरा पीला-पीला और बुखार आलूदा दिखाई देता था। उस

आँखें सुर्ख और बेचैन थीं। मुतवातिर चिल्लाने से उसके होंटों के गिर्द कफ़ आ चला था और उसके सूखे-रूखे बालों की लटों में फुटपाथ की ख़ाक चमक रही थी।

दूसरे दिन दानी द्यू प्राटो के बाहर पवित्र मरियम के कदमों में मुर्दा पाया गया। उसकी आँखें खुली थीं और नीले आसमान में किसी नामुकम्मल सपने को तक रही थीं। उसके कपड़े फटे, चीथड़े और तार तार थे। उसके सीने पर वही तीन ईंटें रखी थीं और उसने पवित्र मरियम के कदमों के फ़र्श पर अपना सिर मार-मार कर तोड़ दिया था।

गिरजा खोल दो।

और घंटे बजाओ।

देखो, ईसा मसीह जा रहा है—

अपने सीने पर ईंटों की सलीब लिये हुए।

अब जन्नत के दरवाज़े गरीबों के लिए खुल गये हैं, क्योंकि एक ऊँट सुई के नाके से नहीं गुज़र सकता, लेकिन एक अमीर आदमी इस नाके से गुज़र सकता है।

और अब इस धरती के मालिक गरीब होंगे और गरीबों के मालिक अमीर होंगे।

वह ईसा मसीह जा रहा है।

२

करीम खाँ

पींदरे और फारस्पारद रोड के नुक्कड़ पर फतह मुहम्मद मिवेह फरोश की दुकान में फजल ने जहाज मार्का बीड़ी का एक बण्डल खरीदा और बीड़ी सुलगा कर उसके दो कश जोर से लेकर उसके अड्डे को वापस जाने लगा तो फतह मुहम्मद ने उसे रोक कर कहा—

"देख वह करीम खाँ आ रहा है, तुझे उससे मिलाता हूँ। मज़े का पठान है। ऐसा पठान तूने जिन्दगी में नहीं देखा होगा।"

फजल ने जोर का कश लेकर आनेवाले की तरफ ध्यान से देखा, फिर बोला —

"हाँ—आजकल इसे हर रोज इधर घूमते हुए देखता हूँ। क्या करता है यह?"

"ड्राईफ्रूट का थोक धन्धा करता है।" फतह मुहम्मद ने फजल को बताया, "खानेपीनेवाला खुले दिल का पठान है। अपना बहुत यार हो गया है। अब तो खत-पत्तर भी मेरे पते पर मँगाता है, हर रोज मेरे पास आता है।"

फतह मुहम्मद की आवाज में अभिमान का एक हल्का सा पुट था।

फजल कुछ कहनेवाला ही था कि इतने में करीम खाँ बिल्कुल पास आ-गया। छ फुट का ऊँचा कड़ियल पठान। रंग चमकते हुए ताँबे की तरह। मूँछें घनी और कड़ी। शलवार, कमीज और जैकेट बिल्कुल साफ-सुथरी, धुली-धुलाई, कहीं पर धब्बे का निशान तक न था। करीम खाँ लम्बे-लम्बे डग भरता हुआ, अस्सलाम अलेकुम कहता हुआ आगे बढ़ा आया और दूकान के सामने सड़क के किनारे बिछे हुए लकड़ी के बेंच पर बैठ गया। जहाँ से नुक्कड़ का नजारा साफ दिखाई देता था। फिर उसने एक रेशमी रूमाल निकाल कर अपना मुँह पोंछा और लुंगी, कुल्लह उतार के फतह मुहम्मद के हवाले किया। जिसने उसे दूकान पर सिगरेट के डिब्बों की एक कतार के ऊपर रख दिया।

करीम खाँ अपना मुँह पोंछ कर बोला—

"बड़ी गर्मी है!"

"यह फजल है!" फतह मुहम्मद ने परिचय कराते हुए कहा, "यह सेठ मौलादीना के बंगले का चौकीदार है।"

करीम खाँ ने बड़े प्रेम से फजल से हाथ मिलाया। अभी वह अपने नये मित्र से कुछ कहनेवाला ही था कि फतह मुहम्मद ने एक खत आगे बढ़ा कर करीम खाँ से कहा, "तुम्हारी चिट्ठी आई है!"

करीम खाँ ने पोस्टकार्ड अपने हाथ में लिया, जल्दी से उस पर निगाह डाली और फिर व्याकुलता के साथ उसे अपने सर से ऊपर उछाल कर फेंक दिया। खत हवा में उड़ता हुआ उसके पीछे जा गिरा!

फजल ने पत्र उठाते हुए कहा, "क्या बात है?"

"घरवाली का खत है।" करीम खाँ ने लापरवाही से कहा।

"घरवाली का खत नहीं पढ़ोगे?" फजल ने आश्चर्य से पूछा।

"पढ़कर क्या

"सब घरवालियाँ पैसा माँगती हैं।" फजल ने एक ऐसे आदमी के लहजे में कहा, जिसने कई बार आत्महत्या का इरादा करके परित्याग कर दिया हो। उसकी एक बीवी थी और छ लड़कियाँ थीं। उसकी आँखों के नीचे कई काले घेरे थे। ऐसे मनुष्य की आँखें थीं, जिसने सब कुछ मंजूर कर लिया हो।

"पैसा तो मैं भेजता हूँ, लाले! मगर हर रोज नहीं भेज सकता। तीसरे चौथे महीने दो-तीन हजार की रकम भेज देता हूँ, क्या यह कम है?"

"कम नहीं, यह तो बहुत है!" फजल ने पत्र वापस करीम खाँ को देते हुए कहा।

करीम खाँ ने खत लेकर उसे फिर हवा में फेंकते हुए कहा, "आजिज कर दिया है उस औरत ने। इससे तो मेरी दूसरी बीवी ही अच्छी थी।"

पत्र लहराता हुआ फुटपाथ से नीचे सड़क पर गिर गया। फजल फिर उसे उठाने के लिए लपका, तो फतह मुहम्मद ने पूछा—

"तुम्हारी दूसरी बीवी को क्या हुआ?"

"उसे दिक हो गया।" करीम खाँ गुस्से से बोला। "और उसे दिक इसलिए हुआ, क्योंकि मेरी पहली बीवी उसे मारती थी।"

"तुम्हारी पहली बीवी तुम्हारी दूसरी बीवी को मारती थी तो तुमने उसे क्यों नहीं रोका?" फजल ने खत उठाते हुए पूछा।

"कैसे रोक सकता था?" करीम खाँ बफर कर बोला।

"वह मुझसे उम्र में नौ साल बड़ी थी, मैं सात साल का था और वह सोलह साल की थी। जब 'चारसद्दे' में बाप ने खानुम से मेरी शादी कर दी और शादी के बाद खानुम मुझे मारने लगी, क्योंकि मैं सात साल का था और वह सोलह साल की थी—मगर पठान का बच्चा सब कुछ सह सकता है किसी की धौंस नहीं सह सकता है। इसलिए जब मैं बड़ा हुआ

तो मैंने फौरन दूसरी शादी कर ली। फरखन्दा से !—अब ग्वानुम मुझे छोड़ कर फरखन्दा को पीटने लगी। फरखन्दा को तपेदिक हो गया। तो मैंने 'चारसदा' छोड़ दिया और अपनी दूसरी बीवी को लेकर सूरत आ गया। ड्राईफ्रूट का धन्धा करने लगा। मगर सूरत आकर भी मेरी बीवी की बीमारी ठीक न हुई। उसे हर रोज तप रहने लगा और रातों को वह जोर-जोर से खाँसने लगती थी। वह दिन व दिन पीली निढाल और बदसूरत होती गई। बिल्कुल हड्डियों का ढाँचा और मुझे उससे खौफ आने लगा। और मैं रातों को उसके साथ एक कमरे में रहने से डरने लगा। अल्लाह पाक की कसम, वह बिल्कुल चुड़ैल दिखाई देती थी, चुड़ैल। और एक चुड़ैल से एक मर्द का बच्चा कैसे मुहब्बत कर सकता है ? हालाँकि जब मैंने उसे पहली बार चारसदे में देखा था, तो वह बड़ी खूबसूरत थी। और सर पर पानी का घड़ा रखे अपनी पतली कमर लचकाती हुई घर जा रही थी, और मैं फौरन उस पर रीझ गया था। फौरन मैंने पैगाम देकर उससे शादी कर ली थी। मगर अब मैं क्या करता ? मुझे तो उससे डर लगता था। कलाम पाक की कसम !"

"तो तुमने उसका इलाज नहीं किया ?" फतह मुहम्मद ने पूछा।

"बहुत किया''''बहुत किया, अपनी बिसात से ज्यादा किया। बड़े-बड़े डाक्टरों, हकीमों, वैदों का इलाज किया। मगर किसी से कोई फायदा न हुआ और वह दिन-ब-दिन एक बदशक्ल भुतनी की तरह दिखाई देने लगी। आखिर मुझको किसी ने बताया कि सूरत से साठ मील दूर जोरागढ़ के गाँव में एक कामिल हकीम रहता है। जो अल्लाह के हुक्म से मायूस मरीजों को भी शफा देता है !''जोरागढ़ का गाँव सूरत से साठ मील दूर है। वहाँ पर कोई मोटर नहीं जाती, रेल नहीं जाती। मगर मैं अल्लाह का नाम लेकर पैदल चल पड़ा और चलते-चलते फरखन्दा से कह गया कि अब एक ऐसे हकीम की दवा लाऊँगा

जिससे तू बिल्कुल ठीक हो जायेगी !'.....

खुश हुई। उसने मेरे सफर के लिए एक

कबाब और परांठे भी, क्योंकि दो दिन का

दो दिन के बाद शाम के वक्त जब मैं

वह मगरिब की नमाज से फारिग होकर अपने

चौकी पर बैठे थे। मैंने जाते ही उनके पाँव पकड़

रसूल और बड़े पीर का वास्ता देकर उनसे

दवा-दारू देने को कहा। हकीम साहब मान गये

की बीमारी पूछने लगे। पूछ ताछ के बाद वह देर त

फिर उन्होंने अन्दर से कागज और कलम मँगाया और

जब वह नुस्खा लिख रहे थे तो मैं उनके घर के

देख रहा था। इतने में एक लड़की आई और दीवार

बेल से लौकियाँ तोड़ने लगी। वह मुझे अच्छी लगी,

वाली, छरहरी छमक-सी लड़की मुझे लौकियाँ तोड़ते हुए

लगी। मैंने हकीम साहब से पूछा—"यह लड़की कौन

बोले, "यह मेरी लड़की है !"

तो मैं बोला, "हकीम साहब ! नुस्खा मत लिखिये।

से मेरा निकाह कर दीजिये। आपको खुदा रसूल और बड़े पीर

मैं अपनी दूसरी बीवी से बहुत तंग आ चुका हूँ। उसकी

बहुत डर लगता है !"

हकीम साहब पहले तो बहुत चौंके, घबराये, फिर जब उन

अता-पता इस्ब निस्ब, खान्दान आमदनी सब दरियाफ्त करके

तरह से इतमिनान कर लिया तो मेरा निकाह अपनी लड़की से कर

निकाह के बाद मैं पाँच दिन ओरागढ़ के गाँव में रहा, फिर वापस

आ गया।

मजीन के भी कि जोरावर आके अपनी
कसम मैं बहुत शर्मिन्दा हुआ। मेरी समझ
करूँ ! इधर फरखन्दा को जवान दे चुका था,
तकाजे चले आ रहे थे। लाचार मैंने हर महीने
भेजना शुरू कर दिया, ताकि उसका मुँह बन्द
"दो सौ रुपया हर महीने भेजते थे ?" फत
से पूछा।

"हाँ लाले ! दो सौ क्या तीन सौ भी भेज सक
धन्धा तो बहुत अच्छा है। और यहाँ बम्बई में तो
है। खुदा के फजल व करम से !"

"फिर क्या हुआ ?" करीम खाँ ने इकर

"पूरे पन्द्रह महीने मजीन को दो सौ रुपया मही
फिर दो महीने बीच में नहीं भेज सका। मगर मजी
चाट लगी थी। उसने एक महीना इन्तजार किया, दूसरे
छोड़कर सूरत मेरे घर आ धमकी। अब वह खुद आ
करता ! कैसे उसे घर नहीं रखता और अभी फरखन्दा
कसम पाक परवर दिगार की, मैं बहुत शर्मिन्दा हुआ। म
ने मुझे ढाढ़स दी, मुझे बहुत समझाया-बुझाया। बोली—

"मजीन तेरी बीबी है, उसे अपने पास रखो, मैं तुम
रहने के लिए इस घर में एक अलग कमरा ठीक किये देती हूँ।
रहना अब तेरा किसी तरह मुनासिब नहीं है। मेरा क्या है—
की मेहमान हूँ, आज मर जाऊँ कि कल मर जाऊँ !"

और इस वाकिये के पूरे पाँच माह बाद वह बेचारी चल
जिन्दा रहने को शायद अभी यह और जिन्दा रहती, मगर कम्बख्
मजीन ने उसका दूध बन्द कर दिया था। ...

चाहता · · हटाओ · · · !"

खत हवा में उछल कर एक लड़की की ओढ़नी में अटक गया जो बड़ी तेजी से सड़क पर से गुजर रही थी। उसके एक हाथ में मिट्टी के तेल की बोतल थी, दूसरे हाथ में सब्जी तरकारी से भरा हुआ थैला था। लड़की खत के अटक जाने से ठिठक गई। फिर उसने चौंक कर करीम खाँ और फजल की तरफ देखा और शर्म से उसका चेहरा लाल हो गया। उसने जल्दी से गर्दन को टेढ़ा करके और कन्धे उचका कर खत को ओढ़नी से गिरा दिया। फिर जंगली हिरनी की तरह चौकड़ी भरती हुई वहाँ से भाग गई।

खत जमीन पर पड़ा था।

करीम खाँ ने बेंच से उठ कर खत को जमीन से उठा लिया। मगर उसने खत पढ़ा नहीं। कुछ क्षणों तक गायब होती हुई लड़की की तरफ देखता रहा और जब वह नुक्कड़ पर गायब हो गई तो वह मुड़ कर फतह मुहम्मद से पूछने लगा।

"लाले! यह किसकी लड़की है? मैं इसको हर रोज इधर से गुजरते हुए देखता हूँ।"

फजल ने सर झुकाये धीरे से कहा —"यह मेरी लड़की है!"

करीम खाँ ने फौरन उसके घुटनों को पकड़ कर कहा,

"पाक परवरदिगार की कसम, इस ऐसी ही लड़की से अपने लिए चाहता था। बिल्कुल ऐसी। बिल्कुल यही · · फतह मुहम्मद लाले! अगर तुम्हें मेरी जिन्दगी अजीज है तो अपने दोस्त को बोल दे कि अपनी लड़की का निकाह मुझसे कर दे · · क्या नाम है उसका?"

●

शामको घर आने के बाद मुश्किल से ही कहीं बाहर घूमने जाने के लि
तैयार होता। अक्सर कमर पकड़ कर कराहते हुए शिकायत करता—
"अरे सुरेखा तुम नहीं जानती। यह अँग्रेज़ी फर्म वाले पैंतीस सौ रुप
अवश्य देते हैं लेकिन इतना काम लेते हैं, इतना काम लेते हैं कि कमर
टूट जाती है। और शाम को कहीं जाने की हिम्मत ही नहीं पड़ती!"
अधिकांश दफ्तर से आते ही भूरी धारियोंवाला नाईट सूट पहन कर
बिस्तर पर लेट जाता और धार्मिक पुस्तकों के पन्ने पलटने लगता। उसे
धार्मिक तथा आध्यात्मिक दर्शन का बहुत ही शौक था। इसलिए वह
आफिस से घर आने के बाद मुश्किल से ही कहीं बाहर जाने के लि
तैयार होता था। कभी-कभी रात के नौ बजे, दस बजे टेलीफोन की घं
बजती। और जब उसे मालूम होता कि अँग्रेज मैनेजर ने किसी ख़
काम के लिए उसे फौरन् अपने घर पर बुलाया है तो वह रिसीवर
रखकर और दर्शन की किताब को तह करके अँग्रेज मैनेजर को बेशुमा
गालियाँ सुनाता। और सुरेखा आलमारी से उसका सूट निकालते हु
उसे टोका करती जाती। "वक्त-बेवक्त बुला लेता है तो क्या हुआ? पैंती
सौ भी तो मिलते हैं। कार भी तो मिली है, पेट्रोल भी मिलता है। इतना
सब कुछ किस हिन्दुस्तानी फर्म में मिलता है? इसलिए नाक-भौं मत
चढ़ाओ, सूट पहनो और जाओ!" इस तरह सुरेखा अपने दफ्ते हुए
पति को सूट पहना कर घर से बाहर धकेल देती और फिर रात के बारह,
एक, डेढ़ बजे तक अपने पति का इन्तजार करती।

मगर ऐसा बहुत कम होता था वर्ना शाम के बाद वह दोनों अक्सर
घर पर रहते थे। सुरेखा की रोमानी तबीयत को यह बात पसंद न थी।
किन्तु क्या करती! पति दफ्तर से आकर फाइलें पटक कर कमर दुखने
की शिकायत करता था। उसी वक्त उसके दोनों बच्चे राजेश और
कमलेश स्कूल से आ जाते और आते ही कुछ खाने को माँगते थे। और

में हौसला और उमंग का भाव ज्वार में धीरे धीरे पैदा होने लगे। एक दिन जब रानी सुरेखा से मिली तो मुसकराते हुए मिली।

"क्या हुआ री!" सुरेखा ने धड़कते हुए दिल से रानी से पूछा, "क्या किसी मालिक आशिक हो गया!"

रानी ने इनकार में सर हिला दिया।

"फिर क्या बात है मुसकरा क्यों रही है!"

आज लंच करने के लिए जब मैं बगलवाले रेस्टोरेंट में पहुँची तो मेरी मेज पर एक आदमी आया और मुझसे कहने लगा—"यदि आप इजाजत दें तो मैं आपकी मेज पर बैठ जाऊँ!"

"देखने में कैसा था!" सुरेखा ने जल्दी से पूछा।

"अच्छा ही था।" रानी बोली।

"मगर मर्द का बच्चा तो था!"

"हाँ, मर्द का बच्चा तो था!"

"लम्बा!"

"नहीं लम्बा भी नहीं ठिगना भी नहीं।"

"भारी भरकम!"

"भारी भी नहीं और दुबला भी नहीं।"

"रंग कैसा था! गोरा!"

"गोरा भी नहीं काला भी नहीं। यही बीचवाला रंग था। कपड़े बड़े अच्छे पहने हुए था और बात बड़े सलीके से करता था।

"फिर क्या हुआ!" सुरेखा ने बेचैनी से पूछा।

"फिर कुछ नहीं हुआ। मैंने सर हिला कर इनकार कर दिया। वह निराश होकर चला गया।"

"अरी कमबख्त, नामुराद, मुरदार," सुरेखा जोर-जोर से रानी गालियाँ देती हुई बोली, "तेरी अक्ल को क्या हुआ है!"

पर ख्याल रखती। रानी के बात-चीत करने के ढंग पर वह शिक्षा दे
उसे दिल लुभानेवाले नये-नये शब्दों को बात-चीत के दरम्या
इस्तेमाल करने पर मजबूर करती। हर रोज उनकी मुलाकातों का न
सुनती। कुरेद कुरेद कर छोटी से-छोटी बातों को पूछती और एक ममत
मयी माँ की तरह उसे शिक्षा देती। उसे आगे बढ़ने के लिए चेतावन
करती। सुरेखा को मालूम हो चुका था कि रानी को प्यार करनेवाल
मर्द रँडुवा है और इञ्जीनियर है तथा उसके कोई बाल-बच्चा भी नहीं है।
वह अधेड़ उम्र का आदमी है। वह बेहद हसीन और हँसमुख स्वभाव
का आदमी है। तथा वह रानी पर दिलोजान से मरता है। यह सब
बातें रानी ने सुरेखा को बता दी थी।

सुरेखा के मजबूर करने पर रानी एक दिन उस मर्द के साथ
सिनेमा देखने गई। समुन्दर के किनारे चहलकदमी करने गई, वैसे
देखने गई थी तथा चाँदनी रात में हवाई अड्डे पर घूमने गई थी। वहीं
पर रानी के प्रेमी ने उसकी कमर में हाथ डाल दिया और उसे अपने
सीने में लगाकर पहली बार उसके होंठो को चूम लिया। उस दिन सुरेखा
ऐसी खुश थी कि वैसी खुशी उसे अपनी बेटी की मँगनी पर भी न होती।

इसी दौरान में सुरेखा के पति को अपनी फर्म के काम के सिलसिले
में एक माह के लिए बिहार दौरे पर जाना पड़ा। बिहार में वह कलकत्ते
जायेगा। सुरेखा ने अभी तक कलकत्ता न देखा था। उसे कलकत्ता
देखने का बहुत दिनों से अरमान था। उसके पति ने बहुत चाहा कि
सुरेखा भी उसके साथ दौरे पर चले। परन्तु सुरेखा ने अपनी सहेली की
खुशी पर अपने अरमानों को न्योछावर कर दिया। वह कह कर कि
बच्चों की पढ़ाई में हर्ज होगा—उसने उस प्रस्ताव को रद्द कर दिया
और उसका पति निराश होकर अकेले ही दौरे पर चला गया।

अब सुरेखा के पास काफी समय था और वह चाहती थी कि इन

पर गवान रगती। रानी के बात-चीत करने के ढंग पर वह निसार देती उसे दिल लुभानेवाले नये-नये शब्दों को बातचीत के दरम्यान इस्तेमाल करने पर मजबूर करती। हर रोज उनकी मुलाकातों का ब्योरा सुनती। कुरेद-कुरेद कर छोटी से-छोटी बातों को पूछती और एक स्नेहमयी माँ की तरह उसे शिक्षा देती। उसे आगे बढ़ने के लिए चेतावनी करती। सुरेखा को मालूम हो चुका था कि रानी को प्यार करनेवाला मर्द रँडुवा है और इंजीनियर है तथा उसके कोई बाल-बच्चा भी नहीं है। वह अधेड़ उम्र का आदमी है। वह बेहद हसीन और हँसमुख स्वभाव का आदमी है। तथा वह रानी पर दिलोजान से मरता है। यह सब बातें रानी ने सुरेखा को बता दी थीं।

सुरेखा के मजबूर करने पर रानी एक दिन उस मर्द के साथ सिनेमा देखने गई। समुन्दर के किनारे चहलकदमी करने गई, कैरे देखने गई थी तथा चाँदनी रात में हवाई अड्डे पर घूमने गई थी। वहाँ पर रानी के प्रेमी ने उसकी कमर में हाथ डाल दिया और उसे अपने सीने से लगाकर पहली बार उसके होंटों को चूम लिया। उस दिन सुरेखा ऐसी खुश थी कि वैसी खुशी उसे अपनी बेटी की मँगनी पर भी न होती।

इसी दौरान में सुरेखा के पति को अपनी फर्म के काम के सिलसिले में एक माह के लिए बिहार दौरे पर जाना पड़ा। बिहार से वह कलकत्ते जायेगा। सुरेखा ने अभी तक कलकत्ता न देखा था। उसे कलकत्ता देखने का बहुत दिनों से अरमान था। उसके पति ने बहुत चाहा कि सुरेखा भी उसके साथ दौरे पर चले। परन्तु सुरेखा ने अपनी सहेली की खुशी पर अपने अरमानों को न्योछावर कर दिया। यह कह कर कि बच्चों की पढ़ाई में हर्ज होगा—उसने उस प्रस्ताव को रद्द कर दिया और उसका पति निराश होकर अकेले ही दौरे पर चला गया।

अब सुरेखा के पास काफी समय था और वह चाहती थी कि इस

मुझे उससे !"

"गुलमोहर में। दिन के दो बजे!"

मैं तेरे साथ चलूँगी। सुरेखा दृढ़ इरादे से बोली, "तेरी बड़ी बहन बनकर। तेरे साथ चलूँगी। मेरे सामने तू उसके साथ कैसे इनकार करेगी।"

दो दिन के बाद रानी और सुरेखा सज-धज कर गुलमोहर रेस्टो में डेढ़ बजे से ही जा बैठीं। उन्होंने अपने लिए एक ऐसा कोना लिया जहाँ से रेस्टोरेंट का बड़ा दरवाजा नजर आता रहे। और आनेवाले की सूरत भी, तथा जहाँ पर अलग-थलग बैठकर सामोदी साथ बातचीत भी की जा सके।

दो बज गये।

ढाई बज गये।

पौने तीन हो गये!

सुरेखा परेशान होकर बार-बार अपनी घड़ी देख रही थी।

रानी अपने होंठ चबाने लगी थी। उसका चेहरा फक हो गया थ उसकी आँखों में आँसू उमड़ने लगे थे।

"वह नहीं आयेगा सखी""वह नहीं आयेगा""इतना कहते-कह एकाएक रानी रुक गई। बड़े दरवाजे पर एक मोटर आकर रुकी औ उसमें से एक मर्द निकला। उसे देखकर रानी के गले से एक हल्की चीख खुशी के मारे निकल गई। वह अपनी सहेली को वहीं छोड़ क बाहर दरवाजे की तरफ भागी।

रानी भाग कर उस मर्द के सीने से लग गई। मर्द मुसकराते हु तथा उसका कंधा थपथपाते हुए बड़े प्यार से उसे रेस्टोरेंट के अन्द ला रहा था। सुरेखा ने ठीक उसी क्षण उन दोनों को अन्दर आते हु देखा! वह उसका पति था!!

के लिए कुमायूँ की घाटी में आया, तो उसकी जेब में सिर्फ पन्द्रह रुपये थे। और आज बीस साल बाद उसकी गिनती कुमायूँ के प्रतिष्ठित ठेकेदारों में होती थी। काठगोदाम में उसका गोदाम सबसे बड़ा और विशाल था और डेढ़ मील के रकबे में फैला हुआ था। उसकी कोठियाँ नैनीताल, काठगोदाम, हल्द्वानी, दिल्ली और देहरादून तक फैली हुई थीं। उसके जंगलों के ठेके कुमायूँ, नेपाल, देहरादून से लेकर कश्मीर तक फैले हुए थे।

लेकिन हीरानन्द शाह सुखबीर को नौदौलता ही समझता था, क्योंकि हीरानन्द खानदानी ठेकेदार था, कुमायूँ ही का रहनेवाला था और पुश्तैनी रईस था। नैनीताल की आधी इमारतें उसकी थीं। रानीखेत का सबसे बड़ा फार्म उसीका था। ज्योलीकोट का सबसे बड़ा शहद का फार्म उसका था। सन्देवोजे के एक कारखाने और शराब के एक कारखाने का भी वह मालिक था। नैनीताल के हर कदम में उसकी चिपर मस्लाई होती थी। चालीस साल की उम्र होने के बावजूद वह जवान और सुन्दर दिखाई देता था। उसके हाथ औरतों के से थे। जिल्द बहुत ही कोमल और गोरी थी। बोलचाल में शालीनता और सभ्यता थी। वह सलीके और रख-रखाववाला आदमी था। उसके पाँच स्त्रियाँ थीं और बहुत से बच्चे थे। कई मोटर गाड़ियाँ थीं। वह हर साल एक नई लड़की को विलायत ले जाता था। उसे संगीत, किताबों और उम्दा किस्म की शराबों में बड़ी दिलचस्पी थी। देखने में वह कोमल आकृतिवाला, कोमल स्वभाववाला और कोमल हृदय मालूम होता था, किन्तु वास्तव में ऐसा न था। अगर उसे किसी बात की जिद पड़ जाय, तो उसे हासिल करके रहता था, चाहे वह औरत हो या जंगल का ठेका। यह जिद भी उसकी पुश्तैनी थी, बुजुर्गों से उत्तराधिकार में मिली थी।

उसने हजारी बातें से आई थी और फिर जायेगी, इसका किसी

शाह की पार्टी से अच्छी और जोरदार मानी गई। आज सुखवीर बहुत ही खुश था। जमीला ने पहला डान्स चीफ कमिश्नर साहब को दिया, दूसरा उनके बेटे रज्जाक को, इसके बाद वह चार बार सुखवीर के साथ नाची और सिर्फ सुखवीर के साथ, और हीरानंद शाह का कहीं दूर-दूर तक पता न था, क्योंकि सुखवीर ने उसे अपनी दावत में आमंत्रित न किया था।

उसके बाद हीरानंद शाह ने कव्वाली की एक बहुत महफिल सजाई।

"मैं मुसलमानों की कल्चर से बहुत प्रभावित हूँ," हीरानंद ने जमीला नूरानी के सामने इकरार किया, "क्या तहजीब है, क्या सिलसिला है, क्या रख रखाव है! मेरे तो सब अच्छे दोस्त मुसलमान हैं, जी!"

"यह कल्चर-वल्चर सब बकवास है!" सुखवीर ने जमीला नूरानी को समझाया, "असल चीज शिकार है। जो मजा शिकार में है, वह कव्वाली में कहाँ! आप ने कभी शेर का शिकार किया है, जमीलाजी? मैं आप को शेर के शिकार पर ले चलूँगा, हाथी पर। घबराइए नहीं, आप बिलकुल महफूज रहेंगी।"

जमीला ने एक शेर मारा—गोली तो सुखवीर ने ही चलाई थी, मगर सिर्फ एक गोली शेर के लगी और वह वहीं ठंडा हो गया। यह गोली जमीला की थी, सुखवीर ने उसे यकीन दिलाया और जमीला शेर की लाश पर अपना पाँव रखकर, तसवीर खिंचवाकर बहुत खुश हुई।

यह तस्वीर अगले सप्ताह महिलाओं के पत्र 'वीमन्स वीकली' के मुखपृष्ठ पर छप गई ओर जमीला नूरानी वह पहली औरत करार दी गई, जिसने पिछले दो सौ सालों में किसी शेर का शिकार किया था।

फिर हीरानंद शाह जमीला नूरानी और उसकी माँ और दो नौकरों और दो छोटे-छोटे भतीजों को लेकर भीमताल और नकुचियाताल घुमा लाया।

साथ नाची थी। हीरानंद साह ने लोकल बैंड को न बुलवाकर
हूगी वूगी बैंड बुलवाया था। मतलब यह कि पार्टी बड़ी टस्से
सभी आए थे, सिवा सुखवीर के, क्योंकि हीरानंद साह ने मु
दावत में बुलाया भी नहीं था।

इस पर सुखवीर ने जलकर दो दिनों बाद जमीला नूरानी क
गिरह मना डाली, हालांकि अभी सालगिरह की तिथि में दो महीने
थे, मगर सुखवीर ने किसी-न-किसी तरह जमीला नूरानी को अपनी
गिरह दो महीने पहले मनानेपर राजी कर लिया।

"दो महीने बाद दूसरी सालगिरह मना डालेंगे," सुखवी
सलाह दी।

"साल में दो मर्तबा सालगिरह!" जमीला नूरानी ने अपनी भौंहें
कमान खींचकर कहा, "वाह, ऐसे तो मैं बहुत जल्दी बूढ़ी हो जाऊँ
मिस्टर वीर!"

मगर जब जमीला नूरानी को सुखवीर ने भेंट में हीरे का एक जड़ाउ
गुलूबंद दिया, तो वह अपनी सालगिरह पहले मनाने को राजी हो गई।
और कोई खूबसूरत औरत इससे बड़ी मेहरबानी नहीं कर सकती कि
अपनी सालगिरह समय से पहले मनाने पर तैयार हो जाए।

पार्टी बड़ी शानदार थी। राजा साहब सागरा और नवाब साहब
पाघरा; बेगम दाऊदी और रानी साहिबा गाऊदी; कर्नल घोड़ेवाला
और मिसेज छतरीवाला; पीर साहब मोढ़ा और महंत साहब रोढ़ा; स
मौजूद थे। नैनीताल का कोई बड़ा आदमी ऐसा न था, जो इस पा
में मौजूद न हो। सबसे बड़ी बात यह थी कि खुद चीफ कमिश्नर साह
बहादुर इस पार्टी में मौजूद थे और उनका बेटा रज्जाक भी मौजूद था,
जो नया-नया आई. ए. एस. की सर्विस में आया था। ये दोनों हाकिम
हीरानंद साह की पार्टी में मौजूद न थे, इसलिए सुखवीर की पार्टी हीरानंद

शाह की पार्टी से अच्छी और जोरदार मानी गई। आज सुखबीर बहुत ही खुश था। जमीला ने पहला डान्स चीफ कमिश्नर साहब को दिया, दूसरा उनके बेटे रज्जाक को, इसके बाद वह चार बार सुखबीर के साथ नाची और सिर्फ सुखबीर के साथ, और हीरानंद शाह का कहीं दूर-दूर तक पता न था, क्योंकि सुखबीर ने उसे अपनी दावत में आमंत्रित न किया था।

उसके बाद हीरानंद शाह ने कव्वाली की एक बहुत महफिल सजाई।

"मैं मुसलमानों की कल्चर से बहुत प्रभावित हूँ," हीरानंद ने जमीला नूरानी के सामने इकरार किया, "क्या तहजीब है, क्या सिलसिला है, क्या रख-रखाव है! मेरे तो सब अच्छे दोस्त मुसलमान हैं, जी!"

"यह कल्चर-वल्चर सब बकवास है!" सुखबीर ने जमीला नूरानी को समझाया, "असल चीज शिकार है। जो मजा शिकार में है, वह कव्वाली में कहाँ! आप ने कभी शेर का शिकार किया है, जमीलाजी! मैं आप को शेर के शिकार पर ले चलूँगा, हाथी पर। घबराइए नहीं, आप बिलकुल महफूज रहेंगी।"

जमीला ने एक शेर मारा—गोली तो सुखबीर ने ही चलाई थी, मगर सिर्फ एक गोली शेर के लगी और वह वहीं ठंडा हो गया। वह गोली जमीला की थी, सुखबीर ने उसे यकीन दिलाया और जमीला शेर की लाश पर अपना पाँव रखकर, तसवीर खिंचवाकर बहुत खुश हुई।

यह तसवीर अगले सप्ताह महिलाओं के पत्र 'वीमन्स वीकली' के मुखपृष्ठ पर छप गई और जमीला नूरानी वह पहली औरत करार दी गई, जिसने पिछले दो सौ सालों में किसी शेर का शिकार किया था।

फिर हीरानंद शाह जमीला नूरानी और उसकी माँ और दो नौकरों और दो छोटे-छोटे भतीजों को लेकर भीमताल और नकुचियाताल घुमा लाया।

गाय नाची थी । हीरानंद साह ने मोहन चंद को न बुलाकर दि
ह्वी पूरी यह पुनवाया था । मतलब यह कि पार्टी चाहे उन्हें की
सभी आए थे, सिवा सुखवीर के, क्योंकि हीरानंद साह ने सुखवीर
दावत में बुलाया भी नहीं था ।

इस पर सुखवीर ने जल्दबाज़ी दो दिनों बाद जमीला नूरानी की सा
गिरह मना डाली, हालाँकि अभी सालगिरह की तिथि में दो महीने बा
थे, मगर सुखवीर ने किसी न-किसी तरह जमीला नूरानी को अपनी सा
गिरह दो महीने पहले मनाने पर राजी कर लिया ।

"दो महीने बाद दूसरी सालगिरह मना डालेंगे," सुखवीर ने
सलाह दी ।

"साल में दो मर्तबा सालगिरह !" जमीला नूरानी ने अपनी भौंहों की
कमानें खींचकर कहा, "वाह, ऐसे तो मैं बहुत जल्दी बूढ़ी हो जाऊँगी,
मिस्टर वीर !"

मगर जब जमीला नूरानी को सुखवीर ने भेंट में हीरे का एक जड़ाऊ
गुलूबंद दिया, तो वह अपनी सालगिरह पहले मनाने को राजी हो गई।
और कोई खूबसूरत औरत इससे बड़ी मेहरबानी नहीं कर सकती कि
अपनी सालगिरह समय से पहले मनाने पर तैयार हो जाए ।

पार्टी बड़ी शानदार थी । राजा साहब सामरा और नवाब साहब
घाघरा; बेगम दाऊदी और रानी साहिबा गाऊदी; कर्नल घोड़ेवाला
और मिसेज छतरीवाला; पीर साहब मोढा और महंत साहब टोढ़ा; सभी
मौजूद थे । नैनीताल का कोई बड़ा आदमी ऐसा न था, जो इस पार्टी
में मौजूद न हो । सबसे बड़ी बात यह थी कि खुद चीफ कमिश्नर साहब
बहादुर इस पार्टी में मौजूद थे और उनका बेटा रज्ज़ाक भी मौ
जो नया-नया आई. ए. एस. की सर्विस में आया था । ये दोनों
हीरानंद साह की पार्टी में मौजूद न थे, इसलिए सुखवीर की पार्टी

निगाहों से जमीला की तरफ टकटकी बाँधे देखता जा रहा था।

यकायक जमीला अपनी कुरसी पर कुसमुसाई।

"एक बात कहूँ?"

"कहो।"

"किसी से कहोगे तो नहीं?"

"नहीं।" सुखबीर का दिल सतोष और प्रसन्नता से धड़कने लगा।

"पहले वायदा करो," वह बड़ी कमजोर और मीठी आवाज में बोली और बोलते-बोलते शर्मा गई।

सुखबीर आगे झुका और उग्रता-भरे स्वर में बोला, "तुम्हारी जान की कसम!"

"हाय, हाय," जमीला घबराकर बोली, "मेरी जान की कसम क्यों खाते हो!"

"इसलिए कि इस दुनिया में मुझे तुम्हारी जान से ज्यादा प्रिय कोई नहीं," सुखबीर ने भावनाओं से भरे स्वर में कहा।

जमीला रहस्यमय लहजे में बोली, "यह हीरानंद साह तुम्हारी बुराई करता था मुझसे।" "कहता था, सुखबीर के टेबिल पर मत बैठा करो। उससे बातें मत किया करो। उसे आता ही क्या है और उसका व्यक्तित्व ही क्या है! जाहिल, लट्ठ और गँवार है। बदतमीज और मिडिल फेल है। निरा नौदौलता है और दौलत भी उसके पास क्या होगी—यही कोई दस-पंद्रह लाख रुपल्ली होगी।"

"क्या कहा!" सुखबीर एकदम भड़ककर बोला, "मैं जाहिल और मिडिल फेल हूँ!"

"आहिस्ता बोलो, वह सुन लेगा।" जमीला ने घबराकर दूसरे कोने में बैठे हुए हीरानंद साह की तरफ आँखों-ही-आँखों में इशारा किया।

"सुन ले," सुखबीर गरजकर बोला, "वह क्या, उसका बाप भी

दो दिनों बाद सुखवीर ने इसी पार्टी को रानीखेत की सैर करवा

जमीला नूरानी बड़ी भोली बाला थी। उसे कुछ मालूम न था गुप्त रूप से किसी के दिल में क्या है। जिस भोलेपन से वह सुखवीर पार्टी में शामिल होती थी, उसी अनजानपन से वह हीरानंद साह पार्टी में आती थी; जिस शुक्रिये से वह सुखवीर का तोहफा मंजूर कर थी, उसी इतमीनान से वह हीरानंद के साथ घूमने जाती थी। उस चेहरे पर ऐसा बेदाग उजलापन था, जिसे देखकर सुखवीर और हीरानंद साह जैसे विलासियों की हिम्मत न होती थी कि उससे कुछ कह सकें। एक बार सुखवीर और साह ने इशारों-ही इशारों में अपना अभिप्राय जताने की कोशिश भी की, मगर भोली जमीला ने कुछ समझा ही नहीं— यूँ साफ-सीधी खड़ी निगाह से उनकी तरफ देखती रही, आश्चर्य से, जैसे उसके पल्ले कुछ न पड़ा हो।

फिर एक दिन जमीला ने हीरानंद साह से कहा, "सुखवीर कहता था कि हीरानंद साह अपनी बीवियों को पीटता है। ऊपर से मुशील बनता है, मगर अंदर से बिल्कुल मूर्ख और पहाड़िया है।"

हीरानंद साह गुस्से से लाल हो गया। "वह मुझे पहाड़िया कहता है! असभ्य और जाहिल, वह! यह पंजाबड़ा मुझे पहाड़िया कहता है, जिसे खुद तमीज छू तक नहीं गई है! जो खुद मिडिल फेल है, वह मुझे जाहिल कहता है!" हीरानंद साह ने नफरत और नाराजी से मुँह फेर लिया। फिर अपने आप पर काबू करके बोला, "जमीलाजी, आप की जान की कसम, जो आज तक मैंने किसी औरत पर हाथ उठाया हो।"

जमीला की घनेरी पलकें उसके गालों पर थरथरायें और उसने मे कहा, "मुझे इसका यकीन है।"

उसके चंद रोज बाद जमीला सुखवीर के साथ उसके टेबिल बैठी थी। सुखवीर अब तक व्हिस्की के पाँच पेग पी चुका था और पेग

सुन ले ! तो मैं नौदौलता हूँ ! मेरे पास सिर्फ दस पंद्रह लाख रुपल्ली है ! साला पहाड़िया, कुत्ता, कमीना !"

सुखवीर अपनी टेबिल से उठ खड़ा हुआ।

जमीला उसका हाथ थाम कर बोली, "मगर तुमने वायदा किया था कि किसी से नहीं कहोगे।"

सुखवीर ने जोर से जमीला का हाथ झटक दिया और मेज पर पड़ा अपना जाम खाली कर दिया। फिर वह तेज कदमों से चलता हुआ हीरानंद साह के सामने जा खड़ा हुआ और गुस्से से काँपती आवाज में बोला, "अबे साह ! तूने मुझे नौदौलता समझा है ? हँ ! मेरे पास सिर्फ दस पन्द्रह लाख रुपल्ली है ? हँ ! और तुम बहुत बड़े सेठ हो ! करोड़ों के मालिक ! कुमायूँ के रईसे आजम ! देखता हूँ, कौन कुमायूँ का रईसे आजम है। मैं या तुम ! अगर अपने बाप के बेटे हो, तो अभी उठकर मेरे साथ झील पर चलो और घरसे पैसे मँगाओ। एक सौ का नोट मैं पानी में डालता हूँ, एक सौ का नोट तुम डालो। देखता हूँ, किसके पास दौलत ज्यादा है—मेरे पास या तुम्हारे पास!...और मैं क्या देखूँगा, सारा क्लब देखेगा...सारा नैनीताल देखेगा।"

"छोड़ो, छोड़ो, जाने दो !" रानी बाजपुर ने सुखवीर का दामन पकड़कर उसे बिठाना चाहा।

"अपने बाप की औलाद हो, तो अभी मेरी शर्त मंजूर करो !" सुखवीर उसी गजबनाक लहजेमें चीखकर बोला, "नहीं तो तुफ़ है तुम पर और तुम्हारी सात पुश्तों पर !"

बिजली की-सी तेजी से हीरानंद साह खड़ा हो गया। उसका कानों तक सुर्ख हो गया और वह चिल्लाकर बोला, "मुझे मंजूर अभी मंजूर है, चलो झीलके किनारे। साला ! बाहर से आठ आने आया था, आज कुमायूँका रईस बना फिरता है ! देख लूँ

: नाग और

रईसी भी !"

क्लब के बहुत-से लोगों ने बीच-बचाव करना चाहा मगर दोनों नशे में चूर, अपनी दौलत में भरे-पुरे, कुरसियाँ घसीटकर खुले बरामदे में चले गए, जो झील के ऊपर बना था। दोनों आमने-सामने लोहे के जंगले के करीब बैठ गए।

नीचे झील का पानी बह रहा था, पानी के किनारे लकड़ी के बजरों पर बैठे हुए मल्लाह चीखकर यात्रियों को नैनी झील की सैर के लिए बुला रहे थे।

"एक रुपये में तल्लीताल ले जाऊँगा, सेठ !"

"डेढ़ रुपये में मल्लीताल से तल्लीताल और तल्लीताल से मल्लीताल ! राजासाहब···रानीसाहब···सेठजी···सरदारजी ! सिर्फ डेढ़ रुपये में !" जोरों से मल्लाहों की आवाज आ रही थी।

मुख्बीर ने सौ का नोट अपनी जेब से निकाला और नीचे पानी में गिरा दिया।

हीरानंद साह ने अपने भारी बटुवे को खोला और सौ का एक नोट बड़ी शेखी से नीचे फेंक दिया।

एक घण्टे के बाद भी वे दोनों बारी-बारी से पानी में नोट फेंक रहे थे। जमीला रज्जाक के साथ डान्स फ्लोर पर नाचने के लिए चली गई थी। झील के पानी में सैकड़ों मल्लाह, डाँडीवाले, मजदूर और मध्यवर्ग के लोग, जिन्हें तैरना आता था, भीड़ की सूरत में इकट्ठा थे और पानी में गिरने के पहले ही नोटों को दबोचने के लिए बेकरार नजर आते थे। नैनीताल के पूरे इतिहास में ऐसी घटना कभी नहीं घटी थी। नीचे पानी में लोग जनून से जैसे पागल हो गए थे। चीख, दहाड़, हाय ! वावेला ! किसी के हाथ में नोट आ जाता, तो वह वहीं डुबकी लगा जाता; दूसरा उसे छीनने के लिए भागता। नोट एक-दूसरे से ऐसे छीने जाते, जैसे कटी

हुई फांग पर लड़के गिनते हैं—देखते-देखते नोट की शिफारीटों पर डालते।

मगर पानी के ऊपर उठे हुए बरामदे में जंगले के किनारे वे दोनों रईस बारी-बारी से हद दर्जे के इतमीनान से नोट डालते जा रहे थे। उन्होंने अपने घरों से नोटों के सन्दूक मँगवा लिये थे। लकड़ी के संदूकों में भरे हुए युद्ध के समय के पुराने नोट, ब्लैक की बेतहाशा कमाई, जिसे व्हाइट करने की सारी कोशिश बेकार साबित हुई थी, लाखों आदमियों की मेहनत एक-एक नोट की सूरत में पानी में बहाई जा रही थी।

दो घण्टे के बाद वे लोग थक-से गए। प्रत्येक क्षण के बाद सन्दूक से एक नोट निकालना, हाथ उठाकर उसे जंगले से बाहर ले जाना, फिर उसे पानी में गिरा देना, फिर हाथ नीचे खींचना, फिर सन्दूक के अन्दर ले जाना, फिर एक नोट निकालना, बड़ी मेहनत का काम है, साहब। दो घण्टों में वे दोनों थक गए।

हीरानंद साह ने कहा, "एक-एक पैग ह्विस्की का न पी लें!"

"क्या मुजायका है!" मुखबीर बोला। अब उसकी ह्विस्की भी उतरने लगी थी।

दोनों ने हाथ रोक लिये और ह्विस्की के लिए आर्डर दिया। मगर वहाँ क्लब में नौकर कहाँ थे। सब लोग नीचे पानी में थे। विवश होकर मुखबीर खुद बार के अन्दर जाके ह्विस्की की बोतल लाया। साह सोडे की बोतल उठाए उसके साथ वापस जंगले पर आया। दोनों ने एक-दूसरे के गिलास में ह्विस्की उँडेलकर और सोडा डालकर पीना शुरू किया।

* * *

"तुम्हारे स्वास्थ्य के लिए!" मुखबीर बोला।

"तुम्हारे सौभाग्य के लिए!" साह बोला।

दोनों ने अपने जाम टकराए और हौले-हौले ह्विस्की पीने लगे।

हीरानंद साह ने अपनी सन्दूक की तरफ देखकर कहा, "साले जंग के दिनों में भी क्या कमाई होती थी!"

"कोई अन्दाजा ही नहीं था।" सुखबीर ने पुराने अच्छे दिनों को याद करते हुए कहा, "पहले रोज एक हजार की आमदनी हुई थी, फिर दो हजार की होने लगी, फिर तीन हजार की। ज्यों-ज्यों जंग बढ़ती गई, मेरी आमदनी भी बढ़ती गई। जब मेरी आमदनी रोज की दस हजार होने लगी, तो मैंने गिनना बन्द कर दिया। नोटों को लकड़ी के खोखों में डालकर घर मे रखता गया। कोई कहाँ तक गिने!"

"तुम दुरुस्त कहते हो!" हीरानंद साह ने इकरार किया। "वे दिन क्या अच्छे थे यार के! अब इस जमाने की कमाई को कौन कमाई कह सकता है! पिछले साल रानीखेत के एक जंगल के ठेके में मेरे बारह लाख टूट गए।"

"मैं कश्मीर के ठेके मे नौ लाख गँवा चुका हूँ।"

"टेण्डरका भाव बढ़ता जा रहा है। पहले जो जंगल दो लाख मे आता था, अब दस लाख में आता है। हुकूमत हम लोगों को तबाह करने पर तुली हुई है," हीरानंद साह आह भर कर बोला।

"आफिसर लोग बेईमान होते जा रहे हैं; रिश्वत लेकर भी काम नहीं करते," सुखबीर उदास लहजे में बोला।

"अब कमाई मे बरकत नहीं रही।"

"तुम बिलकुल दुरुस्त कहते हो, सेठ!"

"नौकर कैसे कामचोर होते जा रहे हैं!" हीरानंद बोला, "ह्विस्की का आर्डर करो, कोई नजर नहीं आता। सारा बार खाली है। भगवान् जाने, ये नौकर कहाँ जाके मर गए हैं।"

"यहाँ कोई किसीकी पछ ताछ करनेवाला नहीं। हमारा ताल क्लब

अब आवारागर्दों का क्लब होता जा रहा है। जिसका जी चाहता है, दस रुपये देकर मेम्बर हो जाता है। इस क्लब की कोई इज्जत नहीं रही।"

"रेजिडेन्शल क्लब की बात और है !" सुखवीर बोला, "सिर्फ गिने चुने आदमी मेम्बर हो सकते हैं। आदमी जब जी चाहे, घर से भागकर क्लब में पनाह ले सकता है। एक रात बाहर रहे, दस रात बाहर रहे, कोई पूछनेवाला नहीं। यहाँ रोज रात को घर जाना पड़ता है।"

ये दोनों आहिस्ता-आहिस्ता घूँट पीकर चुप हो गए, अपनी-अपनी उदासियों में खोये हुए। यकायक सुखवीर की आँखें चमकने लगीं। वह मेज पर आगे झुककर बोला, "सेठ, एक बात समझ में आती है, अगर तुम हाँ कर दो तो···।"

"अरे, तुमसे क्या ना है ! तुम बोलो, मैं तो हमेशा ही से तुम को दिल-ही-दिल में पसन्द करता रहा हूँ। तुम मानोगे नहीं लेकिन सच कहता हूँ, अक्सर पीकर सच बोल जाता हूँ। दस दफा अपने दोनों से इकरार कर चुका हूँ कि आदमी देखा तो सुखवीर ! आठ आने लेकर आया कुमायूँ की वादी में, अकेला आया और आठ आनों से लाखों बना गया !"

"शाहजी," सुखवीर अपनी तारीफ से खुश होके बोला, "सच्ची बात तो यह है कि भगवान् ने तुमको बहुत बड़ा दिल दिया है। इः औरतें वही रख सकता है, जिसका दिल बड़ा हो। मैं तो कहता क्यों न हम दोनों मिलकर क्लब के सामने, झील के दूसरे किनारे पर और रेजिडेन्शल क्लब खड़ा कर दें ! लार्ड क्लब !"

"लार्ड क्लब ! हा हा ! क्या आयडिया है ! दाद देता हूँ, सुखवीर

"आपका बच्चा हूँ," सुखवीर विनय से बोला।

"नहीं, तुम मेरे भाई हो—आज से तुम मेरे छोटे भाई हो।। दोनों मिलकर लार्ड क्लब बनायेंगे, एक सौ कमरों का रेजिडेन्शल क्लब

फर्स्ट क्लास, अपटूडेट, रईसी ठाट'''। आखिर ये लकड़ी के खोखे किस दिन काम आयेंगे !"

इतना कहकर उसने अपने लकड़ी के बक्सों पर और फिर करीब ही सामने मुखबीर के बक्सों पर नजर डाली, जो नोटों से भरे हुए थे और उसकी बुद्धि में रेजिडेन्शल क्लब का महल खड़ा होता गया और उसने अपनी जगह से उठकर मुखबीर का मुँह चूम लिया। अब वे दोनों जमीला को बिल्कुल भूल चुके थे।

लार्ड क्लब ताल क्लब के बिल्कुल ठीक सामने बना है और आजकल हिन्दुस्तान का बेहतरीन रिहाइशी क्लब समझा जाता है। पहले ही साल शाह मुखबीर ऐन्ड कम्पनी ने सात लाख रुपये कमाये, जैसा कि उनका शुरू से ही अन्दाजा था।

जमीला ने रज्जाक से शादी कर ली है, जैसा कि उसका शुरू से ही इरादा था। जमीला जब कभी उस घटना को याद करती है तो उसके मगज में शाह और मुखबीर की सूरतें नहीं उभरतीं, उसे सिर्फ लकड़ी के दो खोखे याद आते हैं, जिनमें नोट भरे हुए थे।

●

ठण्डा कोठा

जब विश्वनाथ पूजा-पाठ से निवृत्त होकर बैठक में आया तो महरिया उसके लिए दूध का गिलास ले आई। जैसे वह आरामकुर्सी पर बैठकर धीरे-धीरे पीने लगा, दूध के बीच में बादाम और पिस्ते आ जाते थे। वह रुककर उन्हें कुट-कुटकर चबाने लगता था। विश्वनाथ को पिस्ता-बादामवाला दूध बहुत पसन्द था। दूध पीकर विश्वनाथ का चेहरा उस बच्चे की तरह हो गया जिसके मुँह से अभी अभी चीनी निकाल ली गई हो। दूध पीकर उसने अपने पेट पर हाथ फेरा, शायद यह देखने के लिए कि दूध पेट में ही गया है या कहीं और तो नहीं चला ग जब उधर से उसे इतमिनान मिला तो उसने एक दूध पिये हुए ग की तरह आराम से एक अच्छी सी डकार ली। अपनी धोती को ठीक किया। फिर महरिया को खाली गिलास देकर बोला—

"आज तेरी मालकिन आ रही है, घर ठीक मिलना चाहिये उम्दा—रसोई-घर साफ-सुथरा, अच्छे झाड़न से पोछा हुआ—।"

"सब ठीक मिलेगा मालिक—" महरिया ने एक मुलझी हुई नौकरानी की तरह कहा और अन्दर जाने लगी।

"सुन," विश्वनाथ उसे रोककर बोला। "तुझे मालूम है, बिटिया भी आ रही है। वह एफ० ए० पास हो गई है।"

"प्रीतिबाला आ रही है—" महरिया पान से सड़े हुए काले-काले दाँतों को निकालकर बोली—

"तो मैं बिटिया के लिए रसमलाई तैयार रखूँगी।"

"विश्वनाथ अपनी बेटी और पत्नी के साथ-साथ आगमन पर बहुत प्रसन्न था। इस खुशी में उसने एक और डकार ली, एक बार फिर अपने नंगे पेट पर हाथ फेरा। जनेऊ को उँगलियों में घुमा कर ठीक किया। और जब उसे यक़ीन हो गया कि पेट और धर्म दोनों सलामत हैं तो उसने आरामकुर्सी के बाजू में लगा हुआ बिजली का एक बटन दबा दिया। बटन दबाते ही कमरे से बाहर दूर कहीं से एक घण्टी बजा और बरामदे में से किसी के कदमों की चाप करीब आती हुई महसूस हुई।

फिर जफ़र अन्दर आया।

"जफ़र—" विश्वनाथ बोला।

"जी," जफ़र बोला।

"मोनू बाबू आ गये?"

"आधे घण्टे से बाहर बैठे हैं।"

"तो उनको अन्दर भेज दो ना। महरिया, एक गिलास दूध और लाओ, बादाम और पिस्ता ज्यादा छोड़ना।" विश्वनाथ ने अपने मेहमान के लिए खास हिदायत दी।

मोनू बाबू बड़े हँसमुख बाबू थे। उनकी जिन्दगी में दो के योगर का बहुत ही दख़ल था। वह अपने बाप के दूसरे बेटे थे और उसकी दूसरी बीवी से थे। उन्होंने एक विधवा से शादी की थी और सेकेण्ड हैण्ड गाड़ियों का धन्धा करते थे। वह साल में दो बार विलायत जाते थे और दो बार पैदा होने की आरज़ू रखते थे। इसलिए उन्होंने अन्दर

आते ही—दूध पेश किये जाने पर दूध के गिलास के साथ दो कटोरियाँ मँगा ली। और बारी-बारी दोनों कटोरियों में दूध डालकर पीने लगे।

"बहुत जी चाहता है कि आपके दो मुँह होते।" विश्वनाथ ने मजाक किया।

"मगर दो होंठ तो हैं।" मोनू बाबू दूध पीते हुए बोले।

"और दो नाकें होतीं।"

"मगर दो नथने तो हैं।" वह अपनी नाक पर हाथ लगाकर बोले।

मोनू बाबू को दो का मर्ज़ था। इसलिए जब बिजनेस की बात होने लगती तो वह दो हजार दो सौ बाईस से कम रकम लेने पर आमादा न होते थे। विश्वनाथ ने बहुत समझाया कि दो हजार ले लो मगर मोनू बाबू किसी तरह राजी न हुए। बोले, मैं दिन में एक तो परफेक्ट धन्धा ऐसा करता हूँ जिसकी रकम का आँकड़ा दो से होता है। मेरे लक की बात यही है।

विश्वनाथ बहुत देर तक मोनू बाबू को समझाते रहे। मगर इस मामले में मोनू बाबू को कोई न समझा सकता था। आखिर में विश्वनाथ ने हथियार डाल दिया और बोले—"अच्छा शाम को आ जाना, तुम्हारी बात रख लेंगे। दोस्त जो ठहरे…"

"तो उनको लेता आऊँ।" मोनू बाबू ने पूछा।

"हाँ, लेते आना।" मगर छः बजे तक जरूर आ जाओ। "मुझे सियालदह स्टेशन पर अपनी बीवी और बच्ची को लेने के लिए जाना है।"

"ठीक छः बजकर दो मिनट पर पहुँच जाऊँगा।" मोनू बाबू हँसकर बोले और चल दिये।

उनके जाने के बाद विश्वनाथ ने फिर घंटी बजाई।

"हुजूर!"

"जी।"

"कमर आ गया !"

"हाँ घण्टे से बाहर बैठा है मालिक ।"

"तो उसे अन्दर भेज दो ना ।" विश्वनाथ ने बड़ी नर्मी और मुलायमियत से कहा ।

कमर के बहुत-से नाम थे। जब वह फ़सल गल्ला गया में था तो उसका नाम भोलिया था। जब बम्बई चला गया और चौंदे में रहने लगा तो उसने अपना नाम विक्टर रख लिया। जब चौंदे से दादर में आया तो दादा बरमाखबर बन गया। वहाँ से जब कमाठीपुरा चला गया तो कमर बन गया। बम्बईवालों ने जब उसे तड़ीपार कर दिया तो वह कलकत्ते चला आया। क्योंकि जिस तरह का उसका काम था उसके लिए एक बड़े शहर का होना जरूरी था।

विश्वनाथ बोले—"कहो कमर ?"

"बोलो सेठ !" कमर ने बेगौरत धारदार लहजे में कहा ।

"सुना है तुमने पाँच सौ पन्द्रह का एयर कण्डीशन्ड कर लिया है ?"

"हाँ सेठ, अच्छा खासी एयर कण्डीशन्ड कर दिया है। अब उसे कोई पाँच सौ पन्द्रह नम्बर नहीं बोलता ।"

"क्या बोलता है !"

"अब हम लोग उसको ठण्डा कोठा बोलता है। अच्छा सोनागाछी घूम आओ, तुमको कोई दूसरा ठण्डा कोठा नहीं मिलेगा।" कमर ने फ़ख्र के साथ कहा, "नया रंग, नया पर्दा, गालीचा, झाड़-फानूस, एकदम फर्स्टक्लास। परफेक्ट कंडीशन, कभी आओ ना।"

"राम राम!" विश्वनाथ घबरा कर बोला—"हम बाल-बच्चेवाले हैं, हम ऐसा काम नहीं करता, कभी नहीं करता।"

कमर विश्वनाथ की घबराहट को देखकर हँसने लगा, बोला, "हमने तो ऐसे ही मजाक किया था।""सेठ तुम्हारी मरजी। फिर कुरसी

करीव खिसका कर बोला—ठण्डे कोठे में और जो कुछ सब है सो है पर माल सब पुराना है—ग्राहक लोग नया माल होने को माँगता—क्यों ?"

'क्यों' कह कर कमर ने विश्वनाथ को तेज निगाहों के साथ देखा। और फिर देर तक चुप रहा।

"माल तो है"—विश्वनाथ ने लापरवाही दिखाते हुए कहा।

"नया।" कमर ने पूछा।

"एकदम नया।" विश्वनाथ ने जवाब दिया।

"मजबूत है ?"

"हाँ।"

"कसा हुआ।"

"एकदम कसा हुआ।"

"स्प्रिंगदार।"

"अच्छा खासी स्प्रिंगदार है।" विश्वनाथ कमर को उसी जबान में समझाने लगा, "एक-एक जोड़ अपनी जगह कसा हुआ है।"

"ऊपर का पालिश कैसा है ?" कमर ने पूछा।

"तू क्या समझता है ? सोलह वर्ष की छोकरी का पालिश कैसा होगा ?"

"तो दिखाओ उसको।" कमर ने चैलेंज किया। और विश्वनाथ ने महरिया से कहा कि वह लक्ष्मी को बाहर ले आये।

जब लक्ष्मी बाहर आई तो कमर ने सबसे पहले तो उसका बूटा-सा कद देखा। फिर उसकी सुन्दर गोरी रंगत देखी, उसके लम्बे बाल देखे, बारीक सीपी की तरह कोमल कान देखे। सुतवाँ नाक देखी, खूब भरे-भरे और गुलाबी होंठों को देखा। कमर ने उसकी आकर्षक आखों पर ध्यान दिया। कमर में हाथ डालकर उसके लोच को परखा, हाथों की सुन्दर

बनावट और सिलवटियों की खूबसूरती को देखा। गरदन के रेशम को निगाहों में भाँप लिया। एक बार उसने लच्छी के छोरों को खोलकर उसके दाँत भी गिन लिये। फिर वह लच्छी के चारों तरफ घूम कर देखा। जगह-जगह टटोला और दो-चार बार मुट्ठी में लेकर मसला और हड्डी की मजबूती का अन्दाजा किया। हर सूरत में परखकर जब सन्तुष्ट हुआ तो बोला—"माल अच्छा है—बोलो क्या लोगे !"

"ढाई हजार रुपये।" विश्वनाथ बेधड़क बोला। कमर की आँखों की चमक से विश्वनाथ ने अन्दाजा लगा लिया था कि माल ग्राहक को जी-जान से जँच गया है।

"क्या बात करते हो सेठ !" कमर ने झुँझलाकर कहा, "इस माल के ढाई हजार रुपये ! ढंग की बात करो। तीन सौ, चार सौ में तो बंगाल का जादू बिकता है। पाँच सौ में कश्मीर का सेब बिकता है। अपना वाला चलना छः सौ में ईरानी आलूचे लाया है। तुम देखोगे तो *दंग रह जाओगे ! तुमसे इस माल के ढाई हजार कौन देगा !"*

"असली पंजाबी माल है कमर मियाँ," विश्वनाथ बाबू गरम जोशी से दुकान पड़ी हुई लच्छी की तरफ इशारा करते हुए बोले। "तुमको तो मालूम है कि बंगाल का जादू दस दिन के बाद नहीं बोलता। कश्मीर का सेब एक सीजन के बाद नहीं चलता। ईरानी आलूचा दूसरे सीजन में ही आलूबुखारा मालूम होने लगता है।"

"वह तो ठीक है मगर—" कमर ने जल्दी से विश्वनाथ की बातचीत के रुख को बदलना चाहा। लेकिन विश्वनाथ उसको अनसुनी करते हुए बोला—"कमर भाई, तुम कोई फुटकल धन्धा नहीं करते हो। तुम्हारी तो बाकायदा दूकानदारी है। तुम तो हमारी तरह बिजनेसमैन हो। तुमको तो सब मालूम है।"

"वह तो सब ठीक है सेठ।" कमर बोला—"लेकिन अपन को भी

इसके दस्तों के दाम हैं--और हजार रुपये इसके हाथों के दाम
इतने मजबूत बेरिंग की तो आजकल मोटरें भी नहीं बनती हैं
कारखाने में। तुम इस किस्म को बुरा कहते हो। अरे यह तो वह
है जो ग्राहक के बटुवे को खाली करवा ले और उसके मुँह से दुआ
आखिरी पावली हलक से उगलवा ले। इसको ले जाओ, इसे
कोठे में रुपयी ही रुपयी हो जायेगी।

"लो--अब एक बात करता हूँ, न तुम्हारे ग्यारह सौ न
हजार, अठारह सौ दे दो--मौज करो।"

"बजाज ने जेब से नोटों की गड्डी निकाली और दोहरा उन्हें
शुरू कर दिया। एक, दो, तीन, चार, सोलह नोट गिनकर उन्हें

बनावट और पिण्डलियों की खूबसूरती को देखा। गरदन के खम को निगाहों में भाँप लिया। एक बार उसने लक्ष्मी के होंठों को खोलकर उसके दाँत भी गिन लिये। फिर वह लक्ष्मी के चारों तरफ घूम कर देखा। जगह-जगह टटोला और दो-चार बार चुटकी लेकर मास और हड्डी की मजबूती का अन्दाजा किया। हर सूरत से परखकर जब सन्तुष्ट हुआ तो बोला—"माल अच्छा है—बोलो क्या लोगे ?"

"ढाई हजार रुपये।" विश्वनाथ बेधड़क बोला। कमर की आँखों की चमक से विश्वनाथ ने अन्दाजा लगा लिया था कि माल ग्राहक को जी-जान से लँच गया है।

"क्या बात करते हो सेठ ?" कमर ने झुँझलाकर कहा, "इस माल के ढाई हजार रुपये ? धन्धे की बात करो। तीन सौ, चार सौ में तो ंगाल का जादू बिकता है। पाँच सौ में कश्मीर का सेब बिकता है। ापना वाला बचना छः सौ में ईरानी आलूचे लाया है। तुम देखोगे तो ंग रह जाओगे। तुमको इस माल के ढाई हजार कौन देगा ?"

"असली पजाबी माल है कमर मियाँ," विश्वनाथ बाबू गरम जोशी । चुपचाप खड़ी हुई लक्ष्मी की तरफ इशारा करते हुए बोले। "तुमको ो मालूम है कि बंगाल का जादू दस दिन के बाद नहीं बोलता। कश्मीर ा सेब एक सीजन के बाद नहीं चलता। ईरानी आलूचा दूसरे सीजन ं ही आलूबुखारा मालूम होने लगता है।"

"वह तो ठीक है मगर—" कमर ने जल्दी से विश्वनाथ की बातचीत के रुख को बदलना चाहा। लेकिन विश्वनाथ उसको अनसुनी करते ुए बोला—"कमर भाई, तुम कोई फुटकल धन्धा नहीं करते हो। तुम्हारी ो बाकायदा दूकानदारी है। तुम तो हमारी तरह बिजनेसमैन हो। तुमको तो सब मालूम है।"

"वह तो सब ठीक है सेठ।" कमर बोला—"लेकिन अपन को भी

बाजार के भाव के साथ चलना पड़ता है
बहुत आ गया है। रेट बहुत मन्दी में जा
ज्यादा नहीं दे सकता।"

"एक हजार इस माल के लिए?" विश
कर कहा। फिर वह जल्दी से अपनी जगह से
की सलवार का एक पांयचा घुटने तक उलट
"इधर देखो इस टांग को। ऐसी टांग कहीं भी
जल्दी से सलवार को टखने के बराबर कर दिय
अपनी जगह आकर खड़ा हो गया। फिर अपने
गरदन को नापते हुए बोला—"इस गरदन को
सुराही भी उसके सामने कुछ नहीं है।" फिर उस
पीठ पर दिया और मुड़ते हुए बोला—"इसको ले जा
कहीं जाना भूल जायेंगे। जहाज से उतरते ही सीधे सु
आया करोगे।"

"वह तो अल्लाह के फज़ल से सब आते हैं।" कम
"सबको मालूम हो गया है कि सोनागाछी में एक ही
"एक बात कहूँ?" विश्वनाथ ने पूछा।
"कहो।"

"न तुम्हारा एक हजार न हमारा ढाई हजार,
क्लोज करो।"

कमर ने इनकार में सर हिलाया, "इस माल के एक ही
है। बाजार में इस क्वालिटी के माल के यही भाव है।
दो सौ ज्यादा ही बोला हूँ।
लो,

के ग्यारह नोट विश्वनाथ को देने लगा।

विश्वनाथ ने इनकार में मुँह फेर लिया। "इस धंधे को करने की तुम्हारी इच्छा नहीं है—महरिया लक्ष्मी को अंदर कर दो।"

महरिया आयी और लक्ष्मी को अंदर ले गई।

जब लक्ष्मी अंदर चली गई तो एक पल को कमर को ऐसा लगा जैसे कि उसकी आँखों की रोशनी चली गई। मगर उसने अपने दिल को कड़ा किया और चेहरे पर इस भाव की झलक तक न आने दिया। और लापरवाही के साथ बोला—"तुम जानते हो बाबू, माल की यह किस्म अक्सर बहुत खराब निकलती है। ऐन टाइम पर धोखा दे जाती है। बहुत अड़ीबाजी करती है। इसको काबू में लाना बहुत मुश्किल है। आठ-दस महीने तो इसको ठीक करने में लग जायँगे। एक साल से पहले इस माल में एक रुपये नफा की उम्मीद नहीं है। मैं दो हजार इस सौदे में फँसा के रह जाऊँ तो भला यह कैसा इनवेस्टमेंट हुआ? तुम खुद सोचो।"

"ग्यारह सौवाला माल भी मेरे पास है"—विश्वनाथ बात का रुख बदल कर बोला।

"जिसको तुम ग्यारह सौवाला बोलते हो वह छै सौ का होगा", कमर ने हँस कर कहा।

"दिखाऊँ?" विश्वनाथ ने पूछा।

"नहीं।" दिखाना हो तो उसे ही एक बार फिर दिखाओ।

विश्वनाथ ने आवाज दी—महरिया फिर लक्ष्मी को लेकर आई। कमर खामोश मगर गहरी कारबारी निगाहों से लक्ष्मी को देखने लगा। लक्ष्मी चुपचाप एक मूर्ति की तरह, जिसे किसी लान में रख दिया गया हो, खामोश खड़ी थी।

"इस तरह क्या देखते हो कमर भाई?" विश्वनाथ ने पूछा—"अपनी क्वालिटी का एक ही नग है सारे कलकत्ते में। दो हजार तो

इसके टखनों के दाम हैं—और हजार रुपये इसके हाथों के दाम हैं। इतने मजबूत चेसिस की तो आजकल मोटरें भी नहीं बनती हैं कि[illegible] कारखाने में। तुम इस किस्म को बुरा कहते हो। अरे यह तो वह [illegible] है जो ग्राहक के बटुवे को खाली करवा ले और उसके मुँह में दुवारं हु[illegible] आखिरी चवन्नी हलक से उगलवा ले। इसको ले जाओ, तुम्हारे [illegible] कोठे में लक्ष्मी ही लक्ष्मी हो जायेगी।

"लो—अब एक बात करता हूँ, न तुम्हारे ग्यारह सौ न मेरे दो हजार, अट्ठारह सौ दे दो—डील करो।"

"कमर ने जेब मे नोटों की गड्डी निकाली और दोबारा उन्हें गिनना शुरू कर दिया। एक, दो, तीन, चार, सोलह नोट गिनकर उसने बाकी नोट अपनी जेब मे डाल लिये, और सोलह सौ विश्वनाथ को देते हुए जरा सख्ती और बेजारी के साथ बोला—"मैं बाजार भाव से बहुत ज्यादा दे रहा हूँ। मगर क्या करूँ, इस टैम पर मुझको नये माल की बड़ी जरूरत है। यह सोलह सौ ले लो और माल मेरे हवाले करो।"

विश्वनाथ ने केवल पल भर के लिए विचार किया। उसने पल भर के लिए कमर की आँखों में देखा और उसने भाँप लिया कि यदि और मस्त पड़ा तो कमर कमरे मे बाहर चला जायगा और सम्बन्ध हमेशा के लिए टूट जायेगा। अतएव उसने दूसरे क्षण ही कमर के हाथ से सोलह सौ के नोट थाम लिये और हँसकर बोला—

"चलो दो सौ तुम पर रहे, अगले सौदे में बराबर हो जायेंगे।"

"अगले धन्धे की बात अगले धन्धे में होगी।" कमर ने सख्ती से कहा, "यह माल मेरे हवाले करो।"

"ले जाओ," विश्वनाथ बोला। "मगर कैसे ले जाओगे?"

"इसके हाथ-पाँव बाँध दो और आँखों पर पट्टी भी चाहिये।" कमर लापरवाही से बोला।

जब लक्ष्मी के हाथ-पाँव रस्सियों से जकड़ दिये गये और आँखों पर पट्टी बाँध दी गई तो कमर ने एक झटके से माल को अपने कन्धे पर रख लिया और विश्वनाथ से बोला—"नीचे पोर्च में बड़ी गाड़ी खड़ी है मगर ड्राइवर कोई ऐसा-वैसा आदमी तो नहीं होगा ?"

"नहीं, मैंने जफर को बोल रखा है—" विश्वनाथ ने कहा। "चलो मैं तुम्हारे साथ नीचे पोर्च तक चलता हूँ।"

पोर्च में कोई नहीं था, उसके चारों ओर ऊँची-ऊँची दीवारें थीं और बाहर की ओर का बड़ा दरवाजा बन्द था। पोर्च में खड़ी हुई गाड़ी में काले पर्दे लगे हुए थे। कमर ने गाड़ी का दरवाजा खोल कर लक्ष्मी को पिछली सीट पर डाल दिया। फिर दरवाजे को बहुत एहतियात से बन्द कर दिया। कमर आगे बैठकर गाड़ी स्टार्ट करने लगा।

* * *

शाम के छ बजे के करीब मोनू बाबू तशरीफ लाये। वक्त से दो मिनट पहले और एक सेकेण्ड हैण्ड गाड़ी में। विश्वनाथ बाबू ने उन्हें दो हजार दो सौ बीस रुपये देकर कहा—"घर में आज साढ़े छ सौ से ज्यादा रुपये नहीं थे और मैं आपको कैश देने का वादा कर चुका था। मेरे पास एक-दो नहीं पूरे सोलह सौ रुपये कम थे। मगर भगवान् की कृपा से ऐन वक्त पर एक धन्धा हो गया। तथा मुझे ठीक सोलह सौ मिल गये और मेरा यह काम बन गया। वह ऊपरवाला बड़ा दयालु है—" बीनू बाबू ने ऊपर हाथ करते हुए कहा सबका काम करता है। बीनू बाबू ने जफर से पूछा—"जफर, गाड़ी को मैकनिक को दिखा ली है ?"

"जी," जफर ने कहा—"सब ठीक है।"

"ठीक नहीं एकदम फरस्ट क्लास है," मोनू बाबू तारीफ करते हुए बोले—"बाजार में इस भाव से ऐसा माल नहीं मिलेगा, इसको बाडी देखिये—इसका रंग देखिये, इसका रोगन देखिये, इसकी ब्रेकें, पहिये,

इसका चेसिस एकदम हाईक्लास है।"

"तो आओ जरा सवारी करके देखें," विश्वनाथ बाबू ने खुश हो

जब गाड़ी बहुत-सी सड़कों और चौकों से गुजरकर पति
मन्दिर के करीब पहुंची, मोनू बाबू और विश्वनाथ बाबू दोनों ने
को देखते ही हाथ जोड़ दिये और आंखों को बन्द करके धीरे-धी
बुदबुदाने लगे।

मोनू बाबू निहायत ही गद्‌गद् होकर बोले, "भगवान् की कृपा से
तो आपका कारबार खूब चल निकला है। अब तो आपने दूसरी गा
भी खरीद ली है।"

बीनू बाबू बड़े ही इतमिनान से सीट पर टेक लगा कर आराम
से सो गये और मोनू बाबू की तरफ एक उँगली उठाकर बोले—"मोनू
बाबू, मैंने यह गाड़ी अपने लिए नहीं खरीदी है, बल्कि अपनी बिटिया
के लिए। प्रीतिबाला ने एम० ए० पास कर लिया है और आज
माँ के साथ वापस आ रही है और अब यहीं कलकत्ते में रहेगी तथा
पढ़ेगी। मैं उसको ऊँचे दरजे की तालीम दिलाऊँगा। यही नहीं,
एक अच्छी-सी गाड़ी खरीद कर उसको दूँगा जिससे मेरी बेटी किसी
की कमी महसूस न करे।"

एकाएक विश्वनाथ बाबू चुप हो गये। क्योंकि गाड़ी एक धक्के से
रुक गई थी। ड्राइवर ने ठीक समय पर ब्रेक लगा दिया था वर्ना दूसरी
गाड़ी से टकरा जाती जो सामने से बड़ी तेजी के साथ बिजली
की तरह कट कर निकल गई थी।

"आप हो तो आप जैसा", मोनू बाबू ने तारीफ करते हुए
कहा। मगर विश्वनाथ ने कोई जवाब न दिया। उसकी
गाड़ी में जिस पर काले पर्दे पड़े हुए थे उसे कमर बहुत ही
हुआ कहीं लिये जा रहा था...

६

नाग और शबनम

लाल पहिनावे में वह अत्यन्त सुन्दर दिखाई देती थी। चमकते हुए गोरे-गोरे गाल चीनी की प्लेट की तरह चिकने, मोतियों की तरह सफेद दाँत और आँखों में एक अजीब भोलापन। ऐसा भोलापन जो उस जमाने की याद दिलाता था जब आदमी न किसी ईश्वर को जानता है, न किसी बुराई को। खुले आकाश की तरह वह नेक और समझदार! आँखें जंगली कमल की तरह अपनी पलकें खोले मुझे देख रही थीं।

वह देवदार के पेड़ के नीचे मिट्टी के एक चबूतरे पर पाँव टिकाये बैठी थी। जहाँ हायड्रोन्जर के पीले, गुलाबी और नीले फूल खिले थे। मैं उसके पास जाकर बैठ गया, मुझे देख कर वह न ठिठकी, न घबराई, न अपनी जगह से सरकी। सर से पाँव तक इक निगाह उसने मुझ पर पूर्ण विश्वास से डाली और बोली—

"आपका बस्ता कहाँ है!"

गुलाबी रंग का एक बस्ता वह अपने घुटनों पर रखे हुए थी। और बार-बार कुछ क्षणों के बाद वह उसे अपने हाथों में उठा कर झुलाने लगती थी। उसे झुलाते हुए बार-बार मेरी ओर अत्यन्त प्रसन्न दृष्टि से

देग लेती थी।

"मेरा बस्ता खो गया।" मैंने उत्तर दिया।

"किस खुशी में!" उसने अपने बस्ते को नीचे घास पर कि
मुझसे पूछा।

मैंने उसकी निर्दोष आँखों की पुतलियों में देखा, लेकिन मुझे
उत्तर नहीं सूझा। भला बस्ता खोने में क्या खुशी है, किसी ची
खोने में क्या खुशी है! ऐसा विज्ञान तो मेरी उम्र के बुद्धिमान लोगों
समझ में कैसे आ सकता है! जब कि वह अच्छी तरह से जानते हैं
जीवन की सारी खुशी खोने में नहीं बल्कि पाने में और प्राप्त करने में है
पृथ्वी का एक टुकड़ा, मुनाफा उगलनेवाला कारखाना, हीरों का ए
हार, एक लम्बी कार, दूसरों को नीचा दिखाने की एक शक्ति। हो
जीवन की खुशी तो यही कुछ पाने और हासिल करने, अपना भला और
दूसरों का बुरा चाहने में है। फिर मैं ढाई साल की इस छोटी मासूम बच्ची
से क्या कहूँ! किस खुशी में आदम ने स्वर्ग को खो दिया! किस खुशी में
मसीह सलीब पर लटक गये! किस खुशी में गांधी ने गोली खाई! हुसेन
ने क्यों जाम शहादत पिया! नदियाँ अपना पानी समुद्र को क्यों दे देत
हैं! फूल अपनी सुगन्ध हवा में क्यों बिखेर देते हैं! प्रेमी किसी के प्रेम में
क्यों मर जाते हैं! यह बुद्धिमान चालाक, दो और दो चार करनेवाली
दुनिया खोने का मजा और उसका स्वाद क्या जाने!

मैं उसके लिए पूरी तरह अपरिचित था। और जब उसने मुझे
देने से असमर्थ पाया तो वह एक अत्यन्त आकर्षक और दया
मेरी ओर देखकर मुसकराई। जैसे माँ अपने मूर्ख बच्चे को दे
सकराती है। फिर उसने अपना नन्हा-सा बस्ता खोला और उस
सात रंग-बिरंगी पेन्सिलें निकालीं और फिर एक पेन्सिल मेरे हाथ
... कर कहा—

"लो इससे लिखो मेरे बस्ते पर।"

कागज पर लिखना कितना सरल है। मुझे उस समय मालूम हुआ, जब मैंने उस गुलाबी रंग के कपड़ेवाले बस्ते पर पेन्सिल से लिखने की कोशिश की। बच्ची मेरे असफल प्रयास को देखकर मुसकराई। उसने पेन्सिल मेरे हाथ से छीन ली और पेन्सिल के नोकदार सिरे की तरफ संकेत करके बोली—

"इधर से मत लिखो, उधर से लिखो, तो लिखा जायेगा!"

मैं पेन्सिल के अनगढ़े सिरे से बस्ते पर लिखने की कोशिश करने गा। बस्ते पर कुछ भी तो नहीं लिखा जा रहा था। लेकिन मेरी बुद्धि ी पाटी पर बहुत-से चित्र अंकित हो रहे थे। बच्ची का चेहरा, उसके टे-छोटे घुँघराले बाल, उसकी आँखों की बारीक पलकें, उसके हाथों ी नन्ही-नन्ही उँगलियाँ। वह चित्र जो मैं पेंसिल की नोक से कभी न ना सकता था, पेंसिल के अनगढ़े भाग से बना रहा था। कभी-कभी वन को दूसरे छोर से देखना भी अच्छा होता है। गरीब कामचोर यों होते हैं? अमीर बेईमान क्यों होते हैं? सुन्दर स्त्रियाँ मूर्ख क्यों होती ? सेब क्यों गिरते हैं? जनसाधारण क्यों उठते हैं? कभी-कभी पेन्सिल ी दूसरी नोक से लिखना और देखना बहुत अच्छा होता है।

मैं अपने मस्तिष्क के चित्रों में मगन उसके बस्ते पर झुका हुआ था। कायक मैंने बच्ची के मुँह से खुशी की एक जोर की चीख सुनी और ने उठा के देखा कि बच्ची देवदार के चबूतरे से बहुत दूर आगे जा चुकी है। और घास के हरे-भरे लान पर एक साँप को उठाये हुए उससे खेलते हुए कह रही है—"आहा! मेरा मालू! मेरा लम्बा मालू!!" और वह जो मालू न था, बल्कि हरी और पीली चित्तियोंवाला एक पहाड़ी साँप था। बच्ची के हाथ में बल खा रहा था और अपने-आपको उसकी बाँह के गिर्द लिपट रहा था और खुश रहा था।

लगा। बच्ची के एक हाथ में साँप था और दूसरे हाथ में दू
था जो सम्भवतः उसकी आया उसके हाथ में थमाक
गई थी और चारों ओर सुन्दर घाटियोंवाले पहाड़ थे। ए
स पर डैजी के फूल खिले हुए थे और मौसम अप्रैल का था
ड़ों पर अंगूर की बेलें चढ़ी हुई थीं। हवा में शहद की
गूँज थी और एक बच्ची साँप से खेल रही थी!
बच्ची ने साँप का मुँह दूध के गिलास में ढकेल दिया और

ओगे भालू! मेरे लम्बे भालू ......।"
खाते हुए धीरे-धीरे बच्ची के हाथ में खुलता गया। अब
शरीर घास पर था और मुँह दूध के गिलास में था। बच्ची
र हाथ फेरते हुए बड़े प्यार से कह रही थी—
हायत अच्छे हैं। आप हायत (निहायत) अच्छे हैं। अब मैं
करूँगी, तो तुमको अपने बस्ते में बन्द करके साथ ले जाऊँ
भालू!"
पीकर मग्न होता गया और अर्धनृत्य के भाव में सरसराते
चारों ओर चक्कर काटने लगा। चमकदार धूप में उसके
और पीली चित्तियाँ बड़ी सुन्दर मालूम हो रही थीं। उस
नी के आलम में दूध का गिलास उसके शरीर से टकरा कर
र बाकी दूध घास पर बिखर गया। साँप तेजी से बल
लते हुए घास की पत्तियों पर से दूध चाटने लगा। उसकी
लड़की के हाथों में यूँ स्पर्श कर रही थी जैसे कृतज्ञता प्रकट

करने के लिए उस बच्ची के हाथ चूम रही हो।

"साँप ! साँप !!"

एकाएक आश्चर्य, डर, भय और घबराहट में दबी हुई एक स्त्री की चीख सुनाई दी और मैंने देखा कि बची की आया दौड़ी-दौड़ी कहीं से आई और उसने झपट कर बची को घास से उठा लिया और उसे लेकर एक तरफ भागी, फिर उसकी भीषण चीखें सुनाई दीं—

"मालजू ! मालजू !! साँप —साँप—इधर आना मालजू ! साँप है साँप—!" आया ज़ोर से चीख रही थी।

यकायक खाली बरामदे के अन्दर के कमरों से बहुत-से लोग निकल आये। बच्ची की माँ और बच्ची का बाप और बच्ची के भाई और दूसरे लोग। दूर पर पास के दूसरे खण्ड में काम करता हुआ मालजू माली भी एक बेलचा लेकर भागा। माँ भय से चिल्लाई—

"हाय हाय !! मेरी बच्ची, मालजू माली !"

माँ बरबस बच्ची की ओर भागी और उसे आया से छीन कर उसने उसे गले से लगा लिया और उसका मुँह चूम-चूमकर रोने लगी। माँ को रोते देखकर बच्ची भी सहम गई, मगर उसकी समझ में कुछ नहीं आया कि उसकी माँ क्यों रो रही है। मालजू ऊँची मेंड़ से नीचे घास के लान पर कूद गया और बेलचे की हत्थी से साँप को मारने लगा।

बच्ची मालजू को बेलचे की हत्थी से साँप को मारते देखकर रोने लगी। अपने नन्हें-नन्हें हाथ फैलाकर रोने लगी।

"मालजू मेरे मालू को मार रहा है, मेरे लम्बे मालू को मारता है, मम्मी मेरे मालू को बचा लो !"

माँ ने क्रोध से एक चाँटा बच्ची के गाल पर रसीद किया और ज़ोर से बोली—

"वह मालू नहीं था, साँप था, ज़हरीला साँप था। वह तुझे काट

...र ठण्डा हो गया । ... से गीर को मार डाला । साँप फ

जीवन में पहली बार यकायक बच्ची की आँखों में भय और डर का विषैला फन लहराया और वह जोर की चीख मारकर अपनी माँ की बाहों में बेहोश हो गई।

वह चीख सुनकर पहाड़ों के कंगूरे काँप उठे। ढलानों के झरने सहम गये। फूलों की शबनम सूख गई।

और घाटियों में कुलेलें करनेवाले हिरन के बच्चे आनेवाली मृत्यु के भय से काँप काँप गये।

मालजू ने साँप को मार कर मेरी तरफ देखा और फिर वह बेरचा अपने कंधे पर रखे हुए देवदार के चबूतरे की ओर बढ़ा। और मेरी तरफ देखकर अभिमान से कहने लगा—

"मैंने साले को मार दिया।" उसने साँप की ओर इशारा किया।

"किस खुशी में ?" मेरे मुँह से बरबस निकला।

मालजू आश्चर्य से मेरे मुँह को ताकने लगा। जैसे किसी अनोखे ...नवर या पगले को देख रहा हो। फिर एक डग आगे बढ़कर ...—

"तुम कौन हो ?"

"मैं ! मेरा नाम निरपराध है !" मेरे मुँह से निकला।

...मगर यहाँ क्यो आये हो ?"

...मुसाफिर हूँ—, यूँ ही जरा दम लेने के लिए देवदार के इस ...र बैठ गया था।" मैंने कोमल स्वर में कहा।

... अब कहाँ जाओगे ?" मालजू मेरे नम्र स्वर से कुछ नरम

नाग और शबनम

"कहीं नहीं जाऊँगा मेरे भाई !" मैंने माल्जू को अपनी किस्मत बताते हुए कहा।

"मैं इसी टूटी फूटी दुनिया की दरारों मे रहूँगा और कभी-कभी बाहर घास पर नृत्य करने के लिए आया करूँगा, ताकि तुम मेरी हत्या कर सको !"

•

आओ मर जायें

रजनी के पास सब कुछ था। कोल्हापुर में उसके पति का एक बड़ा कारखाना था, जिसमें छः हजार मजदूर काम करते थे। इस कारखाने में नई डिजाइन के कृषि-उपयोगी हल और ट्रैक्टरों के कुछ पुर्जे बनते थे। और अब रजनी का पति श्यामराव कोल्हापुर में डीजल इंजिन बनाने का कारखाना खोलने जा रहा था। इसके अतिरिक्त स्वर्गीय रजनी के पिता का बम्बई में एक बड़ा कारखाना था। इस कारखाने में टीन के डिब्बे तैयार होते थे। हर रोज साठ हजार डिब्बे तैयार होते थे, जिन्हें घी बनानेवाली और वनस्पति घी बेचनेवाली कम्पनियाँ तुरंत खरीद लेती थीं। पिता की मृत्यु के बाद यह कारखाना भी रजनी के अधिकार में आ गया था, क्योंकि वह अपने पिता की इकलौती बेटी थी। इसलिए उसके पास क्या कुछ नहीं था—कारखाने, घर, गाड़ी; और अब तो उसकी गोद में तीन साल का बच्चा भी खेलता था। [illegible] के निमन्त्रण पर आने पर श्यामराव ने रजनी से विवाह किया था और अब उसने उसके औद्योगिक साम्राज्य के लिए एक उत्तराधिकारी भी पैदा कर दिया था। श्यामराव बहुत ही प्रसन्न था और यूँ तो रजनी भी

हर प्रकार से प्रसन्न थी—उसके पास दौलत थी, आदर-सम्मान था, संतान थी, सौन्दर्य था और वे तमाम वस्तुएँ थीं, जिनकी अभिलाषा एक नारी कर सकती है—फिर भी वह खुश नहीं थी।

उसे श्यामराव से बहुत ही घृणा थी। यद्यपि वह उसका पति था और भारतीय समाज की परंपराओं और नियमों के अनुसार हर पत्नी को अपने पति के साथ प्रेम होता है, मगर रजनी को नहीं था। श्यामराव की उमर पचपन वर्ष की थी और अब शादी के आठ वर्षों बाद रजनी तीस की हुई थी। पचीस वर्ष का अंतर बहुत बड़ा अंतर होता है। इतना अंतर, जो पहली और तीसरी पीढ़ी के सोचने में होता है, रहने-सहने, खाने-पीने और चलने-फिरने में होता है। वही अंतर इन दोनों के बीच था। श्यामराव दिन में दो घंटे गणपति-पूजन करता था; रजनी दिन में दो घंटे मेक-अप करती थी। श्यामराव दिन में चार घंटे खाँसता था; रजनी दिन में चार घंटे हँसती थी। श्यामराव सोने की गोलियाँ खाए बिना सो नहीं सकता था; रजनी नौकरानी की सहायता के बिना जाग नहीं सकती थी। श्यामराव मराठी में बात करना पसंद करता था; रजनी को अंगरेजीमें बोलना पसन्द था। श्यामराव गीता पढ़ता था; रजनी अगाथा क्रिस्टी की रचनाएँ पढ़ती थी। श्यामराव ठण्डे पानी से नहाता था; रजनी गरम पानी से। श्यामराव ने आज तक शराब और गोश्त को नहीं चखा था; रजनी उनके बिना एक निवाला नहीं खा सकती थी। श्यामराव को क्लब का जीवन पसन्द न था; रजनी बोरवन क्लब, याट क्लब, स्पोर्ट्स क्लब और सेवन क्लब की सदस्या थी। श्यामराव को एकान्त पसन्द था; रजनी को हंगामा और भीड़-भाड़। श्यामराव को नीला रंग पसन्द था; उसको हरा। श्यामराव चाहता था कि मरने के बाद वह स्वर्ग में चला जाय; रजनी चाहती थी कि मरने के बाद भी बोरवन क्लब में वापस आ जाय।

रजनी को लक्ष्मण से प्रेम था।

लक्ष्मण के पास भी सब कुछ था। वह बम्बई की सबसे बड़ी आयरन फाउण्ड्री का मालिक था। उसकी सिलाई की मशीन के कारखाने के माल ने बाहर से आनेवाली सिलाई की मशीनों को हर मैदान में पीट दिया था। लक्ष्मण शुगर फैक्टरी विदर्भ के इलाके का शक्कर का सबसे बड़ा कारखाना था। दौलत, इज्जत, भव्यता, रोब-दाब, क्या कुछ लक्ष्मण के पास नहीं था, मगर फिर भी वह प्रसन्न न था। क्योंकि उसे अपनी पत्नी से सख्त घृणा थी। उसे अपनी पत्नी से उतनी ही सख्त घृणा थी, जितनी रजनी को अपने पति से थी। सम्भव है, इन दोनों के पारस्परिक प्रेम का कारण यही घृणा रही हो।

कुछ भी हो, मगर अब बम्बई के अमीर लोगों के क्षेत्र में लक्ष्मण और रजनी का प्रेम एक खुला 'स्कैण्डल' बन चुका था। वह प्रेम, जो किसी तीसरे की घृणा से आरम्भ हुआ था और अब ऐसा परस्पर आत्म-विस्मृति का रूप ग्रहण कर चुका था कि क्लब में प्रायः लक्ष्मण और रजनी इकट्ठे देखे जाते थे। दोनों के घरों में घरेलू झगड़ों ने एक खतरनाक रूप ले लिया था। इधर लक्ष्मण की पत्नी शान्ति ने अपने पति को तलाक देने से इनकार कर दिया था; उधर श्यामराव किसी भी हालत में अपनी पत्नी को अलग करने पर तैयार न था। परिणाम यह हुआ कि इनकार से प्रेम का जोश और भी बढ़ गया। प्रेम की भावना पानी के प्रवाह की तरह होती है। प्रेम को रास्ता दे दो, तो वह समाज के खेतों में जज्ब हो जाता है और बच्चों की फसल पैदा करने के काम आता है। रास्ता न दो और बाँध बनाकर रोक दो, तो पानी की तरह इकट्ठा होकर उमड़ता है और बिजली पैदा करता है—यह बिजली, जो कभी तो प्रेम करनेवालों के घर को ज्योतिर्मय कर देती है और कभी उन्हें

अन्धकार शान्त कर देती है।

मगर प्रेम करनेवाले परिणाम की चिन्ता कब करते हैं? रजनी और लक्ष्मण समाज के बाँध से टकराकर एक-दूसरे के और भी निकट आ गये थे। अब क्लब और अन्य उच्च स्तर की सामाजिक सभाओं में इकट्ठे देखे जाते थे। प्रेम की तेज विद्युत्-लहरें उनके दिलों में इस प्रबलता से चक्कर काट रही थीं कि वे एक क्षण के लिए भी एक-दूसरे से जुदा होना न चाहते थे। मगर हालात की मजबूरी थी, जो उन्हें रात के बारह बजे, जब क्लब के दरवाजे बन्द होने लगते, एक-दूसरे से जुदा होने के लिए मजबूर कर देती। लक्ष्मण को अपने घर जाना पड़ता और आहें भरती रजनी अपने पति के घर चली जाती।

"घर भी है, गाड़ी भी है, दौलत भी है, इज्जत भी है, मगर तुम मेरे पति नहीं हो, तो क्या मजा है इस दुनिया में!" रजनी झुँझलाकर लक्ष्मण से कहती।

और लक्ष्मण अपने सीने की आग को दबाते घुलते हुए स्वर में अति व्याकुलता से कहता, "अगर मैं तुम्हें अपनी धर्मपत्नी न बना सका, तो रजनी, मैं मर जाऊँगा! भगवान् की सौगन्ध, मैं मर जाऊँगा!"

"आओ, मर जायें!" रजनी शोकावेग से सिसकते हुए बोली, "इस जिन्दगी का फायदा ही क्या है? चार साल मुझे हो गये अपने पति से तलाक माँगते हुए। चार साल तुम्हें हो गये अपनी पत्नी से छुटकारा हासिल करने की कोशिश करते हुए। परिणाम शून्य है। बताओ, ऐसे जीवन से क्या लाभ?"

"तुम ठीक कहती हो।" लक्ष्मण निर्णयात्मक स्वर में बोला, "मैं भी इस जीवन से तंग आ गया हूँ। आओ, मर जायें!"

"मगर मरेंगे कैसे?" उसने गम्भीरता से पूछा।

लक्ष्मण के माथे पर सोच की गहरी लकीरें उभर आईं। उसने सोच

"और लिमरिक !"

"नहीं, सब ठीक है।"

"तो चलो, शुरू करें मरना," रजनी ने बड़े विश्वास के साथ कहा।

वे दोनों यॉट क्लब में बैठे थे। उन्होंने समुद्र के किनारे एक कोने का बड़ा सन शेड अपने लिए चुना था। उसके नीचे कुरसियाँ बिछवाकर उन्होंने धीरे-धीरे पीकर मरना शुरू कर दिया। उनके हृदयों में सच्चा प्रेम था। चेहरे पर दृढ़ निश्चय की लाली थी। हाथों में छलकते हुए जाम थे।

सामने असीम समुद्र लहरा रहा था। प्रेम के लिए लक्ष्मण ने पहला जाम उठाकर कहा, "प्यार की मौत के लिए।" रजनी ने अपना जाम लक्ष्मण के जाम से टकराया और फिर सारी सुबह वे पीते रहे। इसके बाद उन्होंने डटकर लंच खाया—चिकन, क्रीम, सूप और फ्रेंच चीज में दम देकर तैयार की हुई पाम फ्रेट, पेशावरी बर्रा और कुलचा, खड़े मसाले का कोरमा और आधा खट्टा और आधा मीठा चीना, नोडल, सलाद और चीनी कोफ्ते और भुना हुआ मुर्ग और आखिर में चेरी क्रीम के साथ अँगरेजी पीच के कतले। बेहद उत्तम लंच था। मजा आ गया। ठीक है, आदमी मरे भी तो ढब से, इज्जत से और शान से ! ये दूसरे लोग भी क्या मरते हैं--भूख से मर जाते हैं, बेकारी से मर जाते हैं, बीमारी से मर जाते हैं और यदि कुछ न हो सके, तो फिर गाड़ी के नीचे सिर देकर मर जाते हैं ! छि:, छछोरे ! कमीने !

लंच के बाद वे दोनों फिर मरने में व्यस्त हो गए। समुद्र के किनारे सन शेड के नीचे जाकर आराम कुरसियोंपर लेट गए। दोपहर तक उन्होंने बीयर की एक दरजन बोतलें पी डाली थीं और अब उनके सारे शरीर में कुनकुना-सा खुमार लहरें ले रहा था। धूप उम्दा थी और आँखें नींद से बोझिल हुई जा रही थीं।

"दूसरा दौर शुरू करने से पहले जरा आराम न कर लें।" लक्ष्मण ने सलाह दी।

"हाँ ठीक है," रजनी बोली और फिर आँखें बंद करके ऊँघने लगी।

पीले, हरे, ऊदे और गुलाबी सन शेड के नीचे आराम कुरसियों पर दो प्रेम करनेवाले लंबे पड़े थे। समुद्र के पानी में धूप एक हल्के से नशे की तरह घुली हुई थी और हवा के हल्के झोंकों में मौत की धीमी लोरी थी। लक्ष्मण ने आँखें बन्द करते हुए सोचा, ऐसे में मरना कितना सुन्दर लगता है!

वे दोनों पूरी दुपहर सोते रहे। इस बीच श्यामराव आया और अपनी पत्नी को सोते देखकर चुपके से खिसक गया। लक्ष्मण की पत्नी आई और अपने पति पर बेजारी की नजर डालकर चली गई। सम्म बैरे मछलियों की तरह बिना आवाज किये दबेपाँव मेज के इर्द-गिर्द नजरें डालकर खामोशी से गुजरते रहे।

शाम के पाँच बजे के करीब उन दोनों की आँखें खुलीं, तो रजनी और लक्ष्मण ने अपने-अपने क्लाक रूम में जाकर हाथ-मुँह धोए। रजनी ने साड़ी बदली, मेक-अप बदला, बालों में फूल लगाया। लक्ष्मण ने जूते बदले, जुराबें बदलीं, सूट बदला, टाई बदली, बालों में कंघी की और खुशबू लगाई। फिर दोनों आमने-सामने उसी सन शेड के नीचे आकर बैठ गये, ह्विस्की पीने लगे और खाने लगे चिकन चाप, तिक्के, शेर तीतर, शाशिल्क और फिश फिंगर्स। रात का खाना उन्होंने गोल कर दिया और ह्विस्की के जाम पर जाम पीते रहे। सुनहरी ह्विस्की, खूबसूरत समुद्र और मद-भरा संगीत! रात के साढ़े दस बजे तक दो बोतलें समाप्त हो चुकी थीं।

"क्या तुम··तुम··मुझे··देख सकती हो?" लक्ष्मण ने लड़खड़ाते स्वर में पूछा।

"मैं''तुम दोनों को''देख सकती हूँ," रजनी हकलाते हुए बोली।

"दूसरा कौन है?" लक्ष्मण ने पूछा।

"एक तुम हो''और दूसरा?''दूसरे भी तुम हो!"

लक्ष्मण शराब में डूबी हुई हँसी हँसने लगा।

"क्यों हँसते हो?" रजनी ने पूछा।

"मुझे तुम तीन नजर आ रही हो। तीन रजनियाँ''एक''दो''तीन!" लक्ष्मण बारी-बारी से अपने हाथ की अँगुलियाँ उठाते हुए बोला और उसे ऐसा लगा, मानो उसकी एक-एक अँगुली पर एक-एक मनका बोझ है।

एकाएक उसका हाथ ह्विस्की की दूसरी खाली बोतल से टकराया। बोतल जमीन पर जा गिरी और उसका मुँह टूट गया। वह बोतल अब फर्श पर एक खूबसूरत जख्मी औरत की तरह पड़ी थी।

"तीसरी बोतल लाओ," लक्ष्मण बेचैनी से गुर्राया।

बारह बजे के करीब तीसरी बोतल भी खतम हो गई। लक्ष्मण ने कहा, "मुझे''अब तुम नजर नहीं आतीं! मेरी''मेरी आँखों के आगे वह नाच रही हैं।"

"वह क्या?"

"वह।"

"वह क्या?" रजनी ने फिर पूछा।

"वह''जिन के''पर होते हैं।" लक्ष्मण ने सोच-सोच कर कहा।

"परियाँ?"

"नहीं। वह''जिनके पर होते हैं।"

"फरिश्ते?"

"नहीं।" वह''जिनके पर होते हैं। पर''पर''पर! सुनती नहीं हो?" लक्ष्मणको गुस्सा आने लगा था, "वह''जिनके पर होते हैं।"

"तितलियाँ !"

"हाँ···हाँ···हाँ !" लक्ष्मण प्रसन्न होकर बोला, "मेरे आगे पीछे··· ऊपर-नीचे···तितलियाँ नाच रही हैं।"

"मुझे ऐसा लगता है", रजनी बोली, "जैसे तुम काँच के बने हुए हो। मैं तुम्हें आर-पार देख सकती हूँ।"

"मेरा विचार है···कि हम मर रहे हैं", लक्ष्मण ने पूर्ण संतोष के साथ कहा।

"मेरा भी यही विचार है।" वह बोली, "मगर बोतल खतम हो चुकी है।"

"तो चौथी मँगाओ।" लक्ष्मण जोर से चिल्लाया, "बैरा !···बैरा!"

"हुजूर।" एक बैरा दौड़ता हुआ हाजिर हो गया।

"ओल्ड टॉम की एक बोतल और लाओ।"

"हुजूर, बारह बज गये हैं। बार बन्द हो गया है।"

"कैसे बन्द हो सकता है !···अभी तो हम मरे भी नहीं !" लक्ष्मण [illegible] होकर बोला।

"डोंट नॉनसेंस !" रजनी आँखें झपकाते हुए बोली, "पोर्ट वाइन लाओ, हमें आज ही मरना है।"

बैरे की समझ में कुछ न आया, मगर कुछ समझने-समझाने की आवश्यकता भी नहीं थी। शराबियों से दिन रात उसका वास्ता पड़ता था, इसलिए वह बहुत ही नरमी मगर पूरी दृढ़ता के साथ बोला, "माई डियर हुजूर, हुजूर। मगर मैं क्या करूँ ! बार तो अब बन्द हो चुका है।"

"बन्द हो चुका है !" लक्ष्मण हिचकी लेकर बोला, "तो हमें··· [illegible] जल्दी घर पहुँचा दो।"

"[illegible] !" रजनी ने [illegible] हुए कहा,

"हमें तो आज मरना था !"

"बाकी ''कल मरेंगे'', लक्ष्मण ने एक शाहाना लापरवाही से बाजू हिलाते, उठने की कोशिश करते हुए कहा और इस कोशिश में कुरसी से नीचे गिर पड़ा।

"हाय ! मर गया ''मेरा डार्लिंग !" रजनी शराबी लहजे में चीखकर बोली और फौरन बेहोश हो गई।

वे दोनों तो नहीं मरे, लेकिन इस घटना के दो रोज बाद श्यामराव दिल की धड़कन बन्द होने से चल बसा और इसी घटना के कोई छः महीने बाद लक्ष्मण की बीबी भी डबल निमोनिया हो जाने के कारण परलोक सिधार गई। इस प्रकार समाज की वे दीवारें, जो उन दोनों के दरम्यान खड़ी थीं—सयोगवश या दुर्भाग्यवश या दैवी-चमत्कार से—छः महीने में ही दूर हो गईं। अब वह बाँध टूट चुका था, जिसने उनकी भावनाओं को सफलता की मंजिल तक पहुँचने से रोक रखा था और क्लब में लोग हर रोज उनके विवाह की खबर सुनने को उत्सुक रहने लगे।

वे दोनों भी कोई कम उत्सुक नहीं थे। मगर दुनिया को भी तो मुँह दिखाना है और इसी समाज में रहना है, इसलिए शोक की पूरी अवधि उन्होंने एक-दूसरे से मिले या बातचीत किये बगैर गुजार दी। वे दोनों कभी-कभी क्लब अवश्य आते थे और एक-दूसरे से मिलते भी थे। मगर केवल 'हैलो' कहकर एक दूसरे से कतरा जाते थे। वे दोनों दुनिया को विश्वास दिलाना चाहते थे कि वे इतने जल्दबाज और छिछोरे न थे, जितना दुनिया उन्हें समझती थी। फिर उन दोनों के बच्चे भी थे। उन्हें भी मानसिक तौर पर तैयार करना था और इस सारे काम पर वक्त भी लगता है। मगर सच्चा प्रेम हो, तो यह समय भी कट जाता है। इसलिए छः महीने और खामोशी से गुजार दिये गये।

आखिर एक रोज रजनी ने लक्ष्मण को अपने घर पर निमन्त्रित

किया ।

"केवल हम और तुम होंगे," रजनी ने नजरें झुकाते हुए कहा ।

"और बात पक्की कर लेंगे ?" लक्ष्मण ने धड़कते हुए दिल से पूछा ।

"हाँ," रजनी धीमी आवाज में इस तरह लजाकर बोली, जैसे जीवन में पहली बार उसके विवाह की बातचीत छेड़ी जा रही हो ।

निश्चित समय पर लक्ष्मण रजनी के घर पहुँच गया । वह उससे बहुत ही प्रसन्न होकर मिली । मगर लक्ष्मण को यह देखकर जरा आश्चर्य हुआ कि वह उसे ड्राइंग रूम में ले जाने के बदले अपने पिता के निजी आफिस में ले गई ।

उसके बाद रजनी अपने मन में बहुत-सी सम्भावनाओं पर विचार करती रही । शायद यही स्थिति लक्ष्मण की भी थी ।

"यह क्यों ?" लक्ष्मण पूछे बिना न रह सका ।

रजनी ने आहिस्ता से लेकिन दृढ़ स्वर में कहा, "कुछ बातें ऐसी हैं, जो विवाह के पहले हम दोनों में तय हो जाएँ, तो अच्छा है ।"

रजनी अपने पिता की कुरसी पर बैठ गई । मेज के सामने लक्ष्मण बैठ गया और मेज को अपनी अँगुलियों से खटखटाते हुए बोला, "कहो ।"

"यह तो तुम जानते ही हो," रजनी झिझकते झिझकते बोली, "मेरे पति के मरने के बाद सारा बोझ मुझपर आ पड़ा है। मेरे पिता के मरने के बाद डिब्बा फैक्टरी की सारी जिम्मेदारी मुझ पर आ गई है। अब उनके मरने के बाद दूसरे कारखानों और फैक्टरियों का काम मुझे देखना पड़ेगा ।"

"यह औरत का काम नहीं है ।" लक्ष्मण ने जरा गर्व दिखाते हुए कहा, "यह सब मैं कर लूँगा । तुम्हें चिंता करने की आवश्यकता नहीं।"

"क्यों आवश्यकता नहीं ?" रजनी जरा आश्चर्य से बोली, "डिब्बा फैक्टरी का सारा हिसाब-किताब मेरे हाथ में रहा है। मैंने अपने पति को उधर हाथ तक लगाने नहीं दिया। जो काम मैं पिछले आठ बरसों से करती आई हूँ, वह अब क्यों नहीं कर सकती ?"

"सॉरी !" लक्ष्मण ने रजनी के स्वर की दृढ़ता और किसी हद तक तल्खी से प्रभावित होकर कहा, "तुमने मुझे गलत समझा। मेरा उद्देश्य तुम्हारी सहायता करना था; तुम्हारे काम में दखल देना नहीं था। एक पति की हैसियत से मेरा यह कर्तव्य है, लेकिन अगर तुम इसे पसन्द नहीं करतीं, तो मुझे तुम्हारे रोजाना के हिसाब किताब में दखल देने का क्या अधिकार है ? मैं ओवरआल निगरानी कर लिया करूँगा।"

"जी, नहीं।" रजनी जल्दी से बोली, "ओवरआल निगरानी ही तो मैं करती हूँ, वरना दैनिक कार्यों के लिए तो जनरल मैनेजर मौजूद है। निगरानी मैं केवल अपने ही हाथ में रखना चाहती हूँ। यह मत भूलो कि मेरा एक बच्चा भी है।"

"औफ कोर्स, औफ कोर्स !" लक्ष्मण सिर हिलाते हुए बोला।

"और अपने पति के कारखानों का हिसाब-किताब भी मैं अपने हाथ में रखूँगी। स्पष्ट है कि मैं तुम्हारे अनुभव और सलाह से कभी-कभी फायदा उठाऊँगी। मगर' 'सारा कारोबार मेरे हाथ में रहेगा। चेक बुक, बैंक-बैलेंस, संपत्ति, इन तमाम बातों में तुम्हारा कोई दखल न होगा। वैसे मैं तुम्हारी हूँ। तुम्हें तन-मन से प्यार करती हूँ। मगर डार्लिंग, मुझे यह नहीं भूलना चाहिए कि मेरा एक बच्चा भी है, जो अपने पिता के मरने से अनाथ हो गया है।"

"पूअर डार्लिंग !" लक्ष्मण अफसोस भरे लहजे में बोला, "मुझे उस बच्चे की तुमसे अधिक चिन्ता है, इसलिए मैंने यह प्रस्ताव रखा था कि मैं तुम्हारे कारोबार को देख लिया करूँगा। मैं इस पर बल नहीं दे रहा

हूँ। न मुझे इससे एक पाई का लाभ उठाने की इच्छा है। मगर तुम्हारे भविष्य, तुम्हारे बच्चे के भविष्य के लिए मैंने यूँ सोचा था कि जब हमारा विवाह हो रहा है, जब हमारे दिल मिले हैं, तो हमारे कारोबार क्यों न आपस में मिल जाएँ ? इस काम के लिए मैं एक योजना चन्द दिनों से सोच रहा था और आज उसे लेकर तुम्हारे पास आया हूँ। निस्सन्देह इस योजना पर आज अमल नहीं हो सकता, लेकिन विवाह के बाद'' अगर तुम चाहो तो''।"

"वह योजना क्या है ?" रजनी ने पूछा।

"अच्छा तो यही हो कि दोनों कारोबार एक-दूसरे में मिल दिए जाएँ और तुम्हारी मेरी साझी संपत्ति बन जाएँ। चेक बुक और अन्य कागजों पर हम दोनों के हस्ताक्षर होने लगें। मगर तुम्हें यह प्रस्ताव पसन्द नहीं है।"

"डार्लिंग, मेरा एक बच्चा है, यह मत भूलो," रजनी जरा जोर से बोली।

"मेरे भी चार बच्चे हैं," लक्ष्मण ने कुछ कटुता से उत्तर दिया।

कमरे में कुछ क्षणों के लिए एकदम खामोशी छा गई। रजनी सिर झुकाए मेज पर झुक गई। लक्ष्मण ने खामोशी तोड़ते हुए कहा, "अगर यह स्कीम तुम्हें पसन्द नहीं, तो जाने दो। मैं जोर नहीं दूँगा। लेकिन हमारे और तुम्हारे प्रेम के संयोग से एक नया कारखाना जरूर अस्तित्व में आना चाहिए।"

"मैं एक बच्चे के लिए सोच रही थी," रजनी ने आहिस्ता से कहा।

"वह भी हो जायगा। मगर वह इतना महत्वपूर्ण नहीं है, जितनी मेरी यह नयी योजना। मैं चाहता हूँ कि तुम्हारे हिस्सा बनानेवाले

कारखाने में ड्रम और डिब्बे बनाने बन्द कर दिए जाएँ और—"

"डिब्बे बनाने बन्द कर दिए जाएँ !" वह आश्चर्य से चिल्लाकर बोली।

"हाँ, डिब्बे बनाने बन्द कर दिए जाएँ। आजकल वनस्पति घी और पेंटवालों को डिब्बे बेचने में इतना फायदा नहीं, जितना अल्मीनियम के सूटकेस बनाने में है।"

"अल्मीनियम के सूटकेस ! बावले हुए हो !" रजनी ने चीखकर कहा।

"शानदार स्कीम है। आजकल तमाम हवाईजहाज कम्पनियाँ और हवाईजहाज पर यात्रा करनेवाले यात्री अल्मीनियम के सूटकेस प्रयोग करते हैं, क्योंकि ये वजन में बहुत हल्के होते हैं। इसलिए यदि तुम्हारे कारखाने को मेरी आइरन फाउण्ड्री से मिला दिया जाए और टीन के डिब्बों के बजाय अल्मीनियम के सूटकेस—"

"अल्मीनियम के सूटकेस ! माई फुट !" रजनी गरज कर बोली, "मेरे कारखाने में दखल देनेवाले तुम कौन होते हो !"

लक्ष्मण बोला, "तुम्हारे भले के लिए कह रहा हूँ। हर सूटकेस-पर सात रुपए लाभ होता है और टीन के डिब्बों में क्या मिलता है ? तीन पैसे ! क्षमा करना, तुम्हारे पति को हम लोग कारखानेदार कम और कबाड़िया ज्यादा समझते थे।"

"मेरा पति कबाड़िया था, तो तुम लुहार हो ! आइरन फाउण्ड्री ! तुम्हारी आइरन फाउण्ड्री की बैलेन्स-शीट क्या कहती है ? पिछले वर्ष तुम्हें कितना फायदा हुआ ?"

"साढ़े तीन लाख," लक्ष्मण बोला।

रजनी ने कहा, "मेरे टीन के डिब्बों के कारखाने ने पिछले साल साढ़े चार लाख कमाए हैं !"

"यूँ तो मेरी सिलाई की मशीनों के कारखाने ने सत्रह लाख कमाए हैं," लक्ष्मण चिढ़कर बोला।

"तो मेरे जोन्हापुर के कारखाने ने बीस लाख कमाए हैं, श्रीमान," उसने शोखी से कहा।

"आपके स्वर्गीय पिता और स्वर्गीय पति, दोनों के कारोबार में जितनी पूँजी लगी हुई है, उससे दुगुनी पूँजी मेरी अकेली शुगर फैक्टरी में लगी हुई है," लक्ष्मण ने उत्तर दिया।

"अजी, देखी है, आपकी शुगर फैक्टरी में तो स्लंप (मन्दा) चल रहा है आजकल। इस मन्दे में कौन पूछता है आपकी शुगर फैक्टरी को! मेरा डीज़ल का कारखाना देखिए। अकेले पश्चिमी जर्मनी से डीज़ल इंजिनों के लिए बारह लाख रुपए के आर्डर आ चुके हैं। और आप चाहते हैं कि मैं सारा कारोबार ठप करके अल्मीनियम के सूटकेस बनाऊँ! मेरा विचार था कि आप सचमुच मुझसे प्रेम करते हैं। कैसा विचार था मेरा! अल्मीनियम के सूटकेस! जो व्यक्ति मुझसे प्रेम करता है, किस प्रकार मुझे अल्मीनियम के सूटकेस बनाने की सलाह दे सकता है जब तक कि उसके मन में बेईमानी न हो! चोरी और धोखे का ख्याल न हो! मेरे और मेरे बच्चे के भविष्य को तबाह कर देने का इरादा न हो! अल्मीनियम के सूटकेस! खूब!"

"तो तुम्हारे विचार में मैं बेईमान हूँ! चोर हूँ! धोखेबाज हूँ!" लक्ष्मण ने सिर से पाँव तक क्रोध से काँपते हुए कहा और इसी क्रोधित अवस्था में वह अपनी कुरसी से उठ खड़ा हुआ। फिर बोला, "अपने शब्द वापस लो!"

"नहीं लेती!" रजनी ने अपनी कुरसी से उठते हुए कहा, "बल्कि अब तो मैं तुम्हारी बातों को अच्छी तरह समझकर यह कहती हूँ कि तुम्हारा प्रेम केवल एक ढकोसला था। तुम न केवल चोर और बेईमान

हो, बल्कि मूक और फ्रॉड भी हो !"

"और मैं कहता हूँ कि तुम अपने आपको बहुत ही कमीनी, छछोरी और मूर्ख औरत साबित कर रही हो। अब तो मुझे यह सोचकर भी आश्चर्य हो रहा है कि मैं कैसे उस स्त्री से प्रेम कर बैठा, जिसकी कम्पनी केवल टीन के डिब्बे बनाती है !"

"अल्मीनियम के गुटरेस ! माई फुट !"

"शट अप !"

"गेट आउट !" रजनी अपने दोनों हाथ ऊपर उठाकर बोली।

लक्ष्मण ने चन्द क्षणों के लिए रजनी को घूरकर देखा। फिर उसने तेज़ी से अपना फैल्ट हैट उठाया और बाहर निकल गया।

उस दिन के बाद उन दोनों में कभी कोई बातचीत नहीं हुई। अब मैं अगर एक-दूसरे का सामना भी हो जाय, तो बिल्कुल अजनबियों की तरह मिलते हैं और 'हैलो' कहे बगैर, मुँह फेर चुपचाप गुजर जाते हैं।

मिस लोविट

दिन पूरा हो गया था, जैसे हर जिन्दगी के दिन पूरे हो जाते हैं और अब गहरी शाम आ चुकी थी तथा आकाश पर छठवें दिन का चाँद उस बच्चे की तरह चुपचाप और झुका हुआ था जिसके साथ कोई खेलनेवाला न हो।

शहर की रात के कई रंग होते हैं लेकिन पहाड़ की रात के केवल दो रंग, चाँदनी और अन्धकार। खाइयों में फैलनेवाला अन्धकार और किनारों पर चमकनेवाली चाँदनी। जंगलों को ओढ़कर सो जानेवाला अन्धकार और क्षितिज की सीमाओं को प्रकाशित करनेवाली चाँदनी। छठवें दिन की चाँद की रात में चाँदनी कम होती है, रात अधिक होती है। कहीं-कहीं पर घनी डालों की मेहरावों पर चाँदनी चमकती है, किसी ऊँचे चट्टान पर दूर जानेवाले मुसाफिर की तरह बैठकर सुस्ताने लगती है। कभी किसी अन्धकार में डूबे हुए चेहरे के होठों पर यूँ चमकती है, जैसे सागर के गहरे अँधेरे में इन्सान की कोशिश।

क्लब के अर्ध ढके तथा अर्ध खुले लॉन में प्रत्येक व्यक्ति चाँदनी और अँधेरे में चुप था क्योंकि खामोशी भी पहाड़ की रात का स्वभाव है।

लान की बत्तियाँ डिनर तक के लिए बुझा दी गई थीं, जिससे प्रत्येक व्यक्ति रात के सौन्दर्य का आनन्द ले सके और चाँदनी तथा अन्धकार की शतरंजी पर अपने विचारों का खिलौना खोल दे। बत्तियों के बुझते ही बातें और कानाफूसियाँ मध्यम हो गई थीं। अँधेरा बढ़ आया था और उस अँधेरे में चाँदनी ने झिझकते झिझकते अँगुलियाँ बढ़ाकर लोगों और चीजों को छूने की कोशिश की थी। उसने किसी की गर्दन की मेहराब को छूआ और सहसा वह गर्दन सुराही से भी लम्बी हो गई। उसने किसी की आँखों को छूआ और आँखें कमल की तरह खिल गई। चाँदनी किसी के बालों में जा अटकी तथा प्रकाश का आँचल बन गई। चाँदनी शराब के जाम मे घुल गई और उसकी तहों में नये सपने खोलने लगी। उसने ओठों को छुआ और उसे लाल कर दिया। अंगूठी के नगीने को छूआ और उसे हीरे की तरह सर्द दिया। कान के झुमके को छुआ और वहाँ रोशनी के फानूस जगमगा उठे। चाँदनी कहती है, जब तक मैं हूँ अंधकार को स्थान नहीं है।

आज चाँदनी ने मिस लोविट के दिल को छू लिया था और अब वह सबसे अलग-थलग सोफे के एक कोने में सिमटी-सिमटाई चुपचाप बैठी थी। उसकी पूरी देह अँधेरे में थी। चाँदनी सिर्फ उसके सामने रखे हुए मेज पर चांदी के गिलास को छू रही थी और कलाई तक उसके हाथ को जिसमें सोने का एक पतला-सा कंगन उसके हाथ की त्वचा को सह-लाता हुआ काँप रहा था। बुड्ढी मिस लोविट की आज पचहत्तरवीं साल-गिरह थी, इसलिए हमारी कृपालु मेजबान जिनकी वह पुरानी गवर्नेंस थी, आज उसे अपने साथ क्लब में ले आई थीं। मिस लोविट का पहनावा बहुत मामूली था। फिर भी उसके पास जो वस्त्र थे वह उनमें सबसे अच्छा था। बहुत दिनों के बाद आज उसने अपने ओठों पर लाली लगाई थी। बालों को एक नये ढग से सँवारा था यद्यपि उसके सर पर

उतने ही साल में जितने एक अमीर आदमी के दिन में नये सवाल होते हैं। फिर भी उसने अपने उन थोड़े सालों की पूँजी को बड़ी सावधानी से धोया और सँवारा था। अपने बदन पर सुगन्ध लगाई थी, अच्छे कपड़ों को पहना था और कलाई में सोने का कंगन जो कि उसका एकलौता आभूषण था। इस तरह वह सज-सँवर कर हमारी प्रतिष्ठित मेजबान के साथ क्लब आ गई थी।

घाटी में उतर कर क्लब की ओर जाते हुए मैंने नई नजरों से मिस लोविट की तरफ देखा। जिन कुतूहलभरी नजरों से मैंने और मेरी पत्नी ने एक-दूसरे की तरफ देखा तो हम दोनों की निगाहों में एक ही सवाल था। 'बुड्ढी घोड़ी लाल लगाम।' हम लोग डेढ़ हफ्ते से अपनी प्रतिष्ठित मेजबान के आलीशान बँगले में ठहरे हुए थे। मेरी पत्नी तो सैर दो हफ्ते से वहाँ ठहरी थी लेकिन मैं इस दौरान में कूमायूँ के बिखरे हुए पहाड़ों में मूल्यवान् धातुओं की खानों की खोज में भारत सरकार की आज्ञा से घूमता फिरा तथा अपनी खोज से निराश होकर नैनीताल लौट आया। हम लोग कल दिल्ली वापस जानेवाले थे तथा मेजबान ने आज की रात हमारे सम्मान में डिनर दिया था। सुयोग से इस डिनर को मिस लोविट की पचहत्तरवीं साल-गिरह से मिला दिया गया था। एक तीर दो शिकार करना सम्भवतः इसे ही कहते हैं।

इन डेढ़ हफ्तों में मैंने मिस लोविट से 'हैलो' कहने के अलावा मुश्किल ही से कोई और बात-चीत की होगी। यद्यपि मिस लोविट खालिस अंग्रेज गवर्नेस थीं जिन्हें स्वर्गीय महाराजा ने अपनी पत्नी और हमारी माननीय मेजबान की शिक्षा-दीक्षा के लिए रखा था। वह जमाना अंग्रेजों का जमाना था। ताल्लुकेदारों के विलास और ठाट का समय था। और के कितने ही सुन्दर अनुभव, मादकतामय खुशियाँ और स्वाद मिस लोविट के हिस्से में आये होंगे, इसका अनुमान वही लोग कर सकते हैं

जिन्होंने उस समय की एक झलक देखी है, या जिसकी एक झलक आज भी हमारे मेजबान के शानदार बँगले में मिलती है। इतनी बुड्ढी होने पर भी मिस लोविट के चेहरे को देखकर मालूम होता है कि जवानी में यह कितनी विलक्षण सुन्दरी रही होंगी। पुरुषों के कैसे-कैसे झुरमुटों की वह अभ्यस्त रही होंगी और उस समय के रंगीन मिजाज बेफिकरे रईसजादे किस तरह टूट टूटकर उन पर गिरे होंगे। मिस लोविट के चेहरे को देखकर उन सब बातों का खयाल आता है। किन्तु भयानक खंडहरों को दूर ही से देखना ठीक होता है और एक बार देखकर दूसरी बार देखने तथा पास जाने की हिम्मत नहीं होती। इसलिए एक ही घर में इतना अर्सा करीब रहने पर भी 'हैलो' से ज्यादा बात न हो सकी। हम लोग अपने चहचहों और हंगामों तथा गप्पों में मस्त रहे और दूर-दूर अनुभव की सीमाओं पर कभी मिस लोविट की छाया मँडराती रही। उनका पीला ममियों का-सा पुराना और निर्जीव चेहरा किसी पुरानी किताब के दीमक लगे पृष्ठों की तरह काँपता रहा। मिस लोविट अपने कुत्ते के बालों में कंघी कर रही हैं। मिस लोविट अपने पुराने कपड़ों को धूप दिखा रही हैं। मिस लोविट अकेले पेशेन्स खेल रही हैं, अकेले-अकेले एक मध्यम तथा दुःखी मिस मिटा-सा साया हमारे चमकते हुए जीवन के घेरे से बाहर खिसक कर काँपता रहा और काँप-काँपकर खिसकता रहा। केवल एक दिन मैंने इस साये की हमेशा की उपस्थिति से घबरा कर अपनी मेजबान से पूछा और पूछते समय मेरी आवाज में एक हल्की-सी कड़वाहट भी थी।

"आखिर जब अंग्रेज चले गये, तो इन महोदया को यहाँ रहने की क्या जरूरत थी? ऐसा तो नहीं कि इन्हें हिन्दुस्तान की जलवायु अनुकूल है। या हमारे लोगों की प्रकृति, स्वभाव, आदत, पहिनावा किसी मामले में तो मिस लोविट हिन्दुस्तानी नहीं हैं। इनका पहिनावा अंग्रेजी है, कुत्ते

यह पालती हैं, अंग्रेजी खाना यह खाती हैं, सबसे अलग-अलग यह रहती हैं, आखिर इन्हें हिन्दुस्तान में रहने की क्या जरूरत थी ?"

हमारी मेजबान बोलीं—"बीते हुए तीस वर्ष से यह हमारे पास हैं। बचपन में यह मेरे साथ लगा दी गई थीं। क्योंकि छुटपन में ही मेरी शादी कर दी गई थी। और मैं तो खुद अपना लिबास भी ठीक तरह से नहीं पहन सकती थी। इन्होंने ही मुझे सिखाया, पढ़ाया, इस काबिल बनाया, जो आज मैं हूँ। तीस साल तक साथ-साथ रहते अब यह मेरी आदत बन चुकी है और अब न यह मुझे छोड़ने के लिए तैयार हैं न मैं इन्हें। हालाँकि अब मुझे गवर्नेस की कोई जरूरत नहीं तथा जिस तेजी से हालात बदल रहे हैं वह एकाएक—।"

वह एकाएक रुक गईं और हँसकर बोलीं—"उनसे तो यही मालूम होता है कि सम्भवतः किसी दिन मुझे ही किसी की गवर्नेस बनना पड़ेगा। फिर भी मैं जैसे-तैसे इनके साथ निबाह किये जा रही हूँ," बातें करते-करते क्लब आ गया और हम लोग अन्दर चले गये।

•

मिस लोविट ने काँपते हुए हाथ से अपना गिलास उठाया और उसे एक ही घूँट में खाली कर दिया। उस वक्त न जाने मुझे क्या सूझी, मैंने बैरे से ब्राण्डी का एक गिलास मँगाया और प्रसन्नचित्त होकर सब लोगों को छोड़ अकेली एक कोने में बैठी हुई मिस लोविट के पास चला गया और उनकी टेबिल पर गिलास रख उनके पास ही सोफे पर बैठ गया और कहने लगा—

"मैं आपका आमेरिकन पीने आया हूँ।"

"ओ थैंक्यू—थैंक्यू—" मिस लोविट ने जिस काँपती हुई आवाज में कहा उससे मुझे अन्दाजा हो गया कि ये रो रही हैं।

मैं सन्नाटे में आ गया, कुछ समझ में न आया, क्या कहूँ और

क्या न कहूँ। बहुत देर तक चुपचाप बैठा रहा और मुझे ऐसा मालूम हुआ, जैसे मैं किसी वीरान हाल में आ निकला हूँ और धीरे से किसी पुराने दरीचे के पट खोलकर गिरती हुई बारिश में इंगलिश मूरलैण्ड के किसी नीरस और बेरंग दृश्य को देख रहा हूँ। यद्यपि वह बारिश न थी, बुड्ढे झुर्रियोंवाले चेहरे पर चुपचाप बहते हुए किसी के आँसू थे। ऐसे आँसू जिनकी आहट तक किसी को मालूम नहीं होती, ऐसे आँसू जो बिना देखे आँखों से निकलते हैं और दिल की किसी खाई में उतर जाते हैं।

आखिर मैंने कहा—"तुम रो रही हो मिस लोविट !"

वह कुछ नहीं बोलीं'''''

लान में सन्नाटा था। जैसे हम किसी क्लब में नहीं किसी जंगल में आ निकले हों। चारों तरफ खामोशी थी। प्रत्येक अपने-अपने विचारों में खोया था। केवल कहीं-कहीं पर स्त्रियों की मन्द कानाफूसियों की आवाजें यूँ सुनाई देती थीं जैसे दूर कहीं जंगल के अन्दर रात के अँधेरे में कुछ नदियाँ पास आकर एक-दूसरे से बातें करती हों। ठीक इसी समय मिस लोविट सिसक-सिसककर बोलीं—।

"मुझे मारको याद आ रहा है।"

"मारको कौन था ! मैंने पूछा।"

"मेरा मंगेतर था।"

"फ्रान्सीसी था !"

"नहीं आधा फ्रान्सीसी आधा अतालवी। उसके मर्दाना हुस्न में दोनों कौमों के उत्तम गुण इकट्ठे हो गये थे। उसकी रंगत अतालवीयों की तरह जैतूनी थी और नाक और होंठ फ्रान्सीसियों के से और माथा अतालवीयों का-सा और हँसी फ्रान्सीसियों की सी और वैसी ही मधुर और तेज बोलचाल और बड़ी तेज भड़कनेवाला गुस्सा जो अतालवीयों की

आता है, मेरे मारको से बेहतर मर्द मैंने आज तक नहीं देखा। उसका सीना किसी किश्ती के बादबान की तरह विस्तृत था। कद मस्तूल की तरह लम्बा और उसकी आँखें ऐसी चंचल और दयालु थीं, जैसे किसी नटखट बच्चे की ही हो सकती हैं।"

बातें करते करते मिस लोविट की आवाज बदल गई और उसका लहजा सुखद स्मृतियों से जगमगा उठा। मुझे ऐसा महसूस हुआ जैसे बारिश थम गई। जैसे धूप निकल आई हो और अपरिचित हाल का कोना कोना खुश लिबास—खुश शक्ल मर्द और औरतों की बातों से गूँज गया। वह हाल बम्बई में था। बम्बई में समुद्र के किनारे ऊँची चट्टानों पर एक दो मंजिला मकान था, जिसके ऊपर के हाल के दरीचे समुद्र की ओर खुलते थे। इसी घर में मार्था लोविट अपने माँ-बाप के साथ तथा भाई-बहनों के साथ रहती थीं। मेजर लोविट आरक्यालोजिकल डिपार्टमेण्ट में नौकर था। बाँदरे में समुद्र के किनारे एक भव्य तथा सुसजाये मकान में रहता था। इस घर के हाल में एक दिन मार्था लोविट मारको को लेकर आई थी। उससे कुछ दिन पहले मार्था की मुलाकात मारको से आर्मी एनवल बाल में हुई थी। सन् १९१० का जमाना था, एक अतालवी जहाज यूरोपीय यात्रियों को लेकर दुनिया की सैर के लिए निकला था और घूमते-घूमते बम्बई के बन्दरगाह में आ खड़ा हुआ आर्मी एनवल ब्लाक के व्यवस्थापक ने इस जहाज के सब यूरोपी मार को बाल में सम्मिलित होने की दावत दी थी। मारको इसी जहाज एक नाविक था। और यहीं इसी ब्लाक में मारको मार्था से मिला और मिलते ही दिलोजान से आशिक हो गया, क्योंकि मार्था अति सुन्दरी और हिन्दुस्तान में रहकर कुछ गर्म मिजाज भी हो गई थी। इसलिए उ अंग्रेजों के ठण्डे दर्शाले तौर तरीके नापसन्द थे। वह कुछ इस तरह का और मलिक से मुहब्बत करते थे जैसे मुहब्बत न कर रहे हों, उ

पानी में स्नान कर रहे हों। इसलिए मार्था अब तक किसी अंग्रेज की मुहब्बत को खातिर में न लाई थी, लेकिन यह मारको बिल्कुल अलग था।

मारको की मुहब्बत में मार्था को ऐसे लगा, जैसे किसी ने उसे दोनों बाहों में उठाया और ऊपर फूलों की डालियों में उछाल दिया था। या नीचे समुद्र के पानी में मछली की तरह तैरने पर मजबूर कर दिया, जैसे किसी ने उसके दिल के तह को गुदगुदा दिया हो और उसका सारा शरीर हँसने लगा। फिर सहसा बिजली का ऐसा कड़ाका हुआ कि वह डर गई और आँखें मूँदकर अपने प्रेमी की बाहों में जा छिपी। बम्बई में जहाज सिर्फ चार दिन के लिए रुका और वह चार रोज मार्था के लिए जमीन से आसमान और आसमान से जमीन पर आनेवाले दिन-रात थे। वह अपना घर भूल गई, अपने माँ-बाप, भाई बहन, खानदान सबको विस्मृत कर गई। उसका स्वभाव, उसका रोब, दबदबा और राजसी वैभव सबको वह भूल गई। वह एक ऐसी औरत बन गई जो सिर्फ एक मर्द को चाहती है। चौथे दिन मार्था ने मारको को अपने घर बुलाया, उसको दावत दी, उसे अपने माँ-बाप, भाई-बहनों से मिलाया। मारको सबसे मिलकर बहुत खुश हुआ। लेकिन वह लोग उससे मिलकर बिल्कुल खुश नहीं हुए। क्योंकि मारको बिल्कुल हँसमुख, सुन्दर और रोबीला था और अंग्रेजों को यह बातें अच्छी नहीं लगती हैं। इसलिए यह मुलाकात उस दावत के अंग्रेजी खानों की तरह फीकी और बेस्वाद रही।

"मैं दावत के बाद मारको को समुद्र के किनारे ले आई। बांदरे के किनारे जहाँ हमारा घर है वहाँ का समुद्र बिल्कुल हिन्दुस्तानी समुद्र नहीं लगता। कुछ-कुछ वेल्ज के किनारे से मिलता-जुलता है। उस समुद्र के किनारे ऊँची नीची चट्टानों से घिरा हुआ गुलमोहर का एक पेड़ है। ऐसी ही चाँदनी रात थी—ऐसी मन्द और शान्त-आकर्षक सुगन्धवाली—और ऐसी ही रात में उस गुलमोहर के पेड़ के नीचे मारको ने मेरे हाथ

से चूमकर कहा— 'तुम मेरा इन्तजार करना, मैं वापस आऊँगा। एक वर्ष बाद, इसी दिन, इसी रात, यहीं पर, इसी गुल्मोहर के पेड़ के नीचे इसी चाँदनी में तुमसे मिलूँगा। तुम मेरा इन्तजार करना और अपने कौमार्य को कायम रखना। क्योंकि मैं तुमसे शादी करना चाहता हूँ।'

एक वर्ष बीतने से पहले ही मार्था के पिता की नौकरी खत्म हो गई और उसे पेन्शन मिलने लगी। वह इंगलैण्ड जाने के लिए तैयार हो गया। लेकिन मार्था किसी भी तरह उनके साथ इंगलैण्ड जाने के लिए तैयार न हुई। उसकी माँ ने उसे समझाया, उसके बाप ने, भाई बहनों ने समझाया लेकिन मार्था अपनी जिद पर अड़ी रही और विदा का दिन आ गया। इंगलैण्ड जानेवाले जहाज ने लंगर उठाया। आँसुओं से भींगे हुए रुमाल को हिलाती हुई मार्था हिन्दुस्तान के अपरिचित किनारे पर अकेली रह गई क्योंकि उसने वायदा किया था और उसे किसी का इन्तजार था। इस दौरान में बहुत-से अंग्रेजों ने, अच्छे, योग्य, पढ़े-लिखे तथा अच्छे स्वभाव और अच्छे खानदान वाले अंग्रेजों ने उससे मुहब्बत की, उससे शादी करनी चाही। किन्तु मार्था ने सच्चे दिल से सबसे इन्कार कर दिया। क्योंकि वह एक अतालवी नाविक से मुहब्बत करती थी।

इसीलिए उसने आरक्योलाजिकल डिपार्टमेंट ही में एक नौकरी मंजूर कर ली और उस सूने वीरान हाल के दरीचों को खोलकर दिन-रात समुद्र की ओर देखते हुए उस अतालवी नाविक (जहाज) का इन्तजार करती जो दुनिया का चक्कर काटता हुआ उसके लिए वापस आयेगा।

और अन्त में वह दिन आ पहुँचा जब वह जहाज आया और वैसी ही चाँदनी रात में मार्था ने अपने हाल के सारे दरीचे खोल दिये तथा वह सर झुकाकर नीचे गुलमोहर के पेड़ को देखने लगी जहाँ एक अतालवी नाविक खड़ा उसका इन्तजार कर रहा था। अपने सुगन्धित बालों

को खोले हुए मार्था, मारको-मारको चिल्लाती हुई हाल की सीढ़ियों से उतर कर बाहर पोर्च से गुजरती हुई नीचे समुद्र की रेत में उतर गई और दौड़ती-दौड़ती गुलमोहर के पेड़ के नीचे पहुँच कर मारको के सीने से लग गई।

मारको ने मार्था से कहा—"मैं तुम्हें कार्नो के द्वीप में ले चलूँगा। जहाँ मेरा घर है, जहाँ हम लोग मछलियाँ पकड़ते हैं, जहाँ मेरे माँ-बाप हैं और मेरी सात बहनें हैं। कार्नो का द्वीप कैपरी के द्वीप से भी खूबसूरत है और कार्नो की शराब का जवाब दुनिया में कहीं नहीं है। कार्नो से अधिक स्वादिष्ट मछली दुनिया में और कहीं नहीं होती। कार्नो में सब नेकदिल मछुवे बसते हैं। कार्नो के पहाड़ की चोटी पर पवित्र सेन्ट आगस्टस का गिरजा है, इस गिरजा में तुम्हारी और मेरी शादी होगी।'

"मारको मुझे कार्नो ले गया। सचमुच यह एक बहुत ही खूबसूरत द्वीप है। उसके नील रंग समुद्र में सफेद बादबानी किश्तियाँ दौड़ती हैं। मल्लाहों के घर सफेद रंग व रोगन से सजे हुए हैं। कार्नो की ढलानों में अंगूर, संतरे, जैतून तथा अंजीर के बगीचे हैं। बगीचों के किनारे सुन्दर सुन्दर फूलों की क्यारियाँ मिलती हैं। कार्नो की सुर्ख शराब का स्वाद प्रेम व मुहब्बत की तरह मीठा है तथा मुहब्बत की तरह ही जरा कड़ुवा भी है। कार्नो का चर्च पहाड़ की चोटी पर स्थित है। चर्च तक पहुँचने के लिए कार्नो के मनुष्यों ने गाँव के कदमों से पहाड़ की चोटी तक एक हजार सीढ़ियों का जीना काटा है। दूर नीचे से देखने पर यूँ मालूम होता है जैसे चर्च के ऊपर खड़ी हुई मरीयम अपनी ऊँचाई में आसमान की ओर अपने फैलाव में जमीन की दोनों किनारों से छूती है। कार्नो-वालों को अपने गिरजा पर बहुत गर्व है। एक हजार सीढ़ियों का जीना चढ़कर हाथ-में-हाथ मिलाये हुए जब हम दोनों गिरजा के आँगन में

दाखिल हुए तो पवित्र मरियम की मूर्ति के सामने हम
कि जब तक हम दोनों की शादी न हो जायेगी, हम
दूसरे के हवाले न करेंगे। क्योंकि कानों की जमीन
से भी अधिक गर्म है। वहाँ फूल चुम्बन की तरह
का स्वाद मुहब्बत की तरह मीठा है तथा उसी
इसीलिए हम दोनों ने यह कसम खाई।

"मारको ने मुझे अपने घर में रखा और मार
पसन्द भी किया। सारे गाँववालों ने मेरी दावत
भी। मारको की सातों बहनें अतीव सुन्दरी तथा
थीं। मारको का बाप कई दिन तक मुझे अपनी
रहने के तौर-तरीके समझाने के लिए ले जाता
माँ मुझे इस तरह सुलाती और मेरी देख-माल
न होकर मेरी माँ हो।

"किन्तु मेरी शादी की बात किसी तरह
आपस में खुसर-फुसर करते थे और मुझे
एक दिन मारको मुझे अपनी नाव में बिठा
दूर दूर तक कहीं कोई बादबानी किश्ती न
तरफ पानी की लहरें थीं और कानों का
की तरह ऊँचा होता हुआ नजर आता
गये थे, केवल सेण्ट आगस्टस का गिरजा

"वहाँ पहुँच कर मारको ने किश्ती
और मेरे सामने बैठ कर मुझे अजीब नजरों

'क्या बात है?' मैंने उससे पूछा।

"वह बहुत देर तक खामोश रहा
[illegible] देखता रहा। सहसा मैंने

बताते क्यों नहीं हो ?'

"वह फट पड़ा—'मेरे माँ-बाप ने पादरी से शादी के लिए पूछा था। ......मेरा मतलब है......हमारी तुम्हारी शादी के लिए'......।' 'फिर' मैंने पूछा।

'पादरी ने इन्कार कर दिया !'

'क्यों !'

'क्योंकि तुम रोमन कैथोलिक नहीं हो।'

'फिर !' मैंने जरा गुस्से में आकर पूछा।

"मारको ने सर झुका लिया। आहिस्ते से बोला......

'फिर मैं क्या करूँ ! मेरे माँ-बाप ने मुझसे कहा है कि अगर तुम रोमन कैथोलिक हो जाओ तो यह शादी हो सकती है।'

'मैं रोमन कैथोलिक क्यों हो जाऊँ ! तुम प्रोटेस्टेंट क्यों न हो जाओ !' यकायक मैंने बहुत ही कड़वे स्वर में उससे पूछा।

"मारको ने अपने सीने पर सलीब का निशान बनाया......

'कैसे......कैसे मैं अपने माँ-बाप का धर्म छोड़ सकता हूँ !'

'तो मैं कैसे छोड़ सकती हूँ !'

'तुम्हें छोड़ना पड़ेगा मेरी खातिर।' मारको ने गरज कर कहा। यकायक वह थरथर गया था, उसका मुँह लाल हो गया था और आँखों की पुतलियाँ तारों की तरह नाचने लगी थीं।

'यह कभी नहीं हो सकता।' मैंने मुट्ठियों को भींच कर कहा।

'बको मत।'

'तुम बको मत।' मैंने भी वैसे ही जवाब दिया।

"गुस्से से मेरे शरीर का रोआँ-रोआँ काँप रहा था, और मैं रोने के करीब थी। उस वक्त यदि मारको मुझे अपने गले से लगा लेता तो मैं उसके सीने से लग जाती और सिसक-सिसक कर अपना गुस्सा भी

मिस लोबिट :

"जब मैं वापस आई, तो मुझे अपने पुराने पते पर मारको का पत्र मिला। वह बड़े पछतावे और गहरी मुहब्बत का खत था। उस खत में मारको ने फैसला किया था कि ज्यों ही रोमन कैथोलिक रस्म व रिवाज के अनुसार उसकी सातों बहनों की शादी हो जायेगी, जिसमें सबसे छोटी की उम्र दस साल की थी, तो वह कार्नो द्वीप को सदैव के लिए छोड़ देगा और एक बार फिर बम्बई का चक्कर लगायेगा और यद्यपि उसे कोई आशा तो नहीं है, किन्तु मारको एक बार बम्बई जरूर आयेगा और समुद्र के किनारे गुलमोहर के पेड़ के नीचे खड़ा होकर अपनी प्रेमिका को जरूर आवाज देगा।

"मैंने उसके पत्र का तो कोई उत्तर नहीं दिया, लेकिन हर साल क्रिसमस के मौके पर उसे एक कार्ड जरूर भेजती रही। जिसमें कुछ लिखा न होता था, केवल मेरे दस्तखत होते थे' 'मिस मार्था लोबिद।'

"जवाब में हर साल मुझे भी उसका क्रिसमस कार्ड मिलता था। जिस पर सिर्फ इतना लिखा होता था—'तुम्हारा प्रेमी' 'मारको।'

"फिर मैंने बम्बई आकर नौकरी कर ली और उस सुनसान हाल के दरीचे खोले और मारको का इन्तजार करने लगी। पहले साल मैंने सोचा—अब उसकी सबसे बड़ी बहिन की शादी हो गई होगी, दूसरे साल मैंने सोचा अब उसकी दूसरी बहन की शादी हो गई होगी। तीसरे साल मैंने सोचा—अब उसकी तीसरी बहिन की शादी हो गई होगी। इस तरह अगले पाँच सालों में मैंने उसकी पाँच बहिनों की शादी कर डाली। फिर सातवीं की शादी के लिए तीन साल इन्तजार किया क्योंकि वह सबसे छोटी थी। इस दौरान में प्लेग की बीमारी फैली और मैंने सोचा कि शायद मारको की बहनें इस बीमारी में मर गई होंगी''
फिर सारे यूरोप में इन्फ्लूएंजा फैला और मैंने सोचा—कि अब तो मारको की अविवाहित बहनों का बचना मुश्किल है। मगर मारको के

आने रहे। बारह साल में बारह पत्र आये, आशा के बारह संगीत···पत्र आने बन्द हो गये, फिर मैं हर साल क्रिसमस के दिन मारको पत्र डालती रही। बीस वर्ष तक मैंने बम्बई में मारको का इन्तजार किया। फिर मैं बम्बई से लखनऊ चली आई। स्वर्गीय महाराज ने अपनी मेजबान के लिए मुझे गवर्नेस रख लिया। कुछ वर्षों के बाद महाराज मर गये और देश स्वतन्त्र हो गया। जमाना बदल गया—एक युग बीत गया किन्तु मारको नहीं आया।"

"और तुमने शादी नहीं की?" मैंने मिस लोविट से पूछा।

"नहीं!"

"मुमकिन है मारको ने शादी कर ली हो।"

"ऐसा मत कहो।" मिस लोविट ने नागिन की तरह फुँफकारते हुए कहा···और मुझे उसके नाखून अपनी कलाई में गड़ते हुए महसूस हुए।

"हो नहीं सकता···हो नहीं सकता। अभी तक मेरा मारको मेरी तरह कुँआरा है।"

"मुमकिन है उसने सोचा हो, अब बहुत देर हो चुकी है।" मैंने समझाया।

"मुहब्बत के लिए कभी देर नहीं होती—" वह सख्ती से बोली।

"मारको अब बुड्ढा हो चुका होगा। उसके बेटे होंगे, पोते और पर-पोते और वह अपने सुन्दर द्वीप में अपने परिवारवालों में घिरा हुआ खाना खा रहा होगा।"

"मेरा मारको कभी बुड्ढा नहीं हो सकता।" मार्था लोविट ने बहुत ही तेजी और उग्रता से कहा।—"वह उसी तरह सुन्दर, युवा और हँसमुख है जिस तरह मैंने उसे पहले देखा था।"

फिर एकाएक मिस लोविट की आवाज थर्रा गई। उसने मेरी

कलाई छोड़ दी और रुँधे हुए स्वर में सिसकते हुए हवा की भी काना-फूसी से धीरे स्वर में बोली—"उस वक्त जब तुम आये और आकर सोफ़े पर बैठ गये, मुझे यह लग रहा था और अब भी यह लगता है जैसे यह सामने की झील नैनीताल की झील नहीं है। कार्नों का छोटा-सा समुद्र है। यह सामने जो पहाड़ है, और काले पेड़ों से जो ढका है, कार्नों के द्वीप का पहाड़ है और यह सामने जो रोशनियाँ हैं कार्नों के मछुओं के घर हैं। और वह दूर जो एक बादबानी नाव अपने सफ़ेद बादबान फैलाये चाँदनी में डोल रही है मारको की नाव है जिसे खेता हुआ, गीत गाता हुआ मारको इधर आयेगा और पानी में डूबते हुए चोबी खम्भों से बाँधकर क्लब के अन्दर आ जायेगा और सबके सामने मुझे अपनी गोद में उठा लेगा। मुझे इस किनारे से उस किनारे ले जायेगा जहाँ मेरा घर है।"

एकाएक मार्था की आवाज डूब गई और मेरी आँखों में आँसू उमड़ आये। मैंने उसके सोने के कंगनवाले काँपते हुए हाथ को चुम्बन दिया और कहा—"मिस मार्था लोविट, सीता केवल हमारे देश की ही शोभा नहीं हैं। सीता तो हर देश में होती हैं।"

फिर एकाएक क्लब के लान में प्रकाश जगमगा उठा। क्योंकि डिनर का समय हो गया था और मैं सोफ़े से उठकर खड़ा हो गया। सम्मान के साथ मिस लोविट के सामने झुककर और उसका हाथ थाम कर, उसे खाने के कमरे की तरफ़ यूँ ले चला जैसे मेरी बगल में कोई पचहत्तर वर्षीय बुढ़िया नहीं है बल्कि किसी अनजाने द्वीप की सुन्दरी राज-कुमारी है।

●

बचनसिंह

लिंकिंग रोड के अड्डे पर तीन टैक्सियाँ खड़ी थीं।

मैं उनकी तरफ गौर से देखता हुआ आगे बढ़ता चला आ रहा था और अभी फैसला न कर पाया था कि किसमें बैठूँ कि इतने में एक आवाज आयी, "इधर आओ जी, अपने बचनसिंह की टैक्सी में बैठो। उधर मुँह उठाये हुए कहाँ भगे जा रहे हो, बादशाहो!"

मैंने पलटकर देखा, टैक्सियों के अड्डे के बिल्कुल सामने ईरानी रेस्तोराँ के बाहर एक दुबला-पतला तेज लहजे और शरीर आँखोंवाला सरदार बचनसिंह मुझे अपनी टैक्सी से हाथ निकाले अपनी तरफ बुला रहा है और सफेद-सफेद दाँतों से मुँह खोले हुए मुस्करा रहा है।

बचनसिंह की सूरत जानी-पहचानी मालूम हुई। बाज सूरतें ऐसी होती हैं कि चाहे जिंदगी में आपने उन्हें पहले कभी न देखा हो, लेकिन पहली ही मुलाकात में ऐसा मालूम होता है मानो बरसों की मुलाकात है। मैं जल्दी से टैक्सी का पट खोलकर उसमें बैठ गया। मेरे बैठने से पहले बचनसिंह ने फ्लैग गिरा दिया था और मीटर चालू करके लिंकिंग रोड से घोड़बन्दर रोड की तरफ रवाना हो चुका था।

"आप भूल गये मुझको ! उस दिन आप मुझे भांडुप अपने घर से लेकर चिंचपोकली आये थे ! कोई तीन महीने की बात है।"

मुझे मालूम था कि मैं भांडुप में नहीं रहता और न कभी चिंचपोकली जाता हूँ मगर मुझे कहना ही पड़ा, "आँ-हाँ, याद आया, कहिये बचनसिंहजी, मिजाज तो अच्छे हैं !"

"वाह गुरु की कृपा है ! मगर आप तो मुझे भूल ही गये थे और किसी दूसरी टैक्सी में बैठनेवाले थे," बचनसिंह कुछ खफा होकर मुझसे बोला, "मगर मैं तो अपने ग्राहकों को पहचानता हूँ। एक बार सूरत देख लूँ तो जिंदगी भर नहीं भूलता। याद है, आज से पाँच महीने पहले अगस्त की एक भीगती हुई शाम में आपने कुलावे से एक लड़की उठायी थी, मिस दूनावाला उसका नाम था। रात के दो बजे मैं उसे आपकी मिस दूनावाला को, खड़ा पारसी के चौक में छोड़कर आया था, याद है !"

अब मैं क्या कहता कि कुलावे से लड़की उठाने की मुझे हसरत ही रही। इतने पैसे ही कभी जेब में न हुए और फिर मिस दूनावाला ! मेरी बीवी अगर कहीं सुन ले तो मार-मारकर मुझे जूतावाला बना दे। मगर बचनसिंह ने इस फर्राटे से गाड़ी घुमाकर एक ट्रक के करीब से निकाली कि मेरी साँस ऊपर-की-ऊपर और नीचे-की-नीचे रह गई।

कुछ क्षण तक चुप रहने के बाद मैंने हाँफते हुए खिसियानी हँसी के साथ कहा, "क्या याददाश्त है आपकी बचनसिंहजी, कुछ भूलते ही नहीं हो, मगर गाड़ी जरा धीमे चलाओ।"

"भूलने के दिन तो बचनसिंह पैदा ही नहीं हुआ," बचनसिंह ने खुश होकर कहा और इस खुशी में गाड़ी की रफ्तार और तेज कर दी। "और फिर वह चीज भी अच्छी थी," बचनसिंह ने अपने होंटों पर जुबान फेरते हुए कहा, "भुने हुए तीतर की तरह खस्ता रही होगी,

क्यों ?" कहकर बचनसिंह ने ऐसी शरीर निगाहों से मेरी तरफ देखा कि मैं झेंप गया और टैक्सी पेट्रोल ले जानेवाली लारी से टकराते-टकराते बची। बचनसिंह लारीवाले को गालियाँ देने लगा, "देखकर नहीं चलते हैं ये हरामजादे, अभी तेरे पेट्रोल में एक तीली डालके फूँक दूँगा; जाने किस अमहक ने तुझे लाइसेंस दे दिया है ?"

"मगर तुम तो खुद ही पीछे देख रहे थे, अपने ग्राहक से बातों में मशगूल थे।" लारी ड्राइवर बोला, "वह तो मैंने एक्सीडेंट बचा लिया, नहीं तो···"

मगर बचनसिंह ने पूरी बात नहीं सुनी, गाड़ी बढ़ाकर आगे ले गया और जाते-जाते मुझसे कहने लगा, "देख लिया आपने ! ये लारीवाले कितने हरामी होते हैं। बेतहाशा तेज रफ्तार से गाड़ी चलाते हैं, न आगे देखते हैं न पीछे और कसूरवार हम गरीब टैक्सी ड्राइवरों को ठहराते हैं।"

"बेशक, बेशक, इसमें क्या शुबहा है !" मैंने कमजोर लहजे में कहा। हालाँ कि गलती उसी की थी मगर बचनसिंह को टोकने की हिम्मत मुझमें न थी।

"मगर मैंने भी साले की तबीयत साफ कर दी। ओ बच मोड़ पे बुड्ढे !" बचनसिंह ने एकदम ब्रेक लगायी, मगर फिर भी सामने से गुजरता हुआ बुड्ढा उसकी टैक्सी से टकराते-टकराते बचा।

बचनसिंह गाड़ी को रेस करते हुए बोला, "अगर मैं गाड़ी होशियारी से न चलाता तो यह बुड्ढा तो अपने बाप के पास पहुँच गया था, हा, हा, हा ! कहाँ जाना है जी, आपको ?"

मेरा जी तो यहीं उतरने को चाह रहा था, मगर आस-पास कोई टैक्सी खाली न देखकर मुझे मजबूर होकर कहना पड़ा, "थोड़ी दूर जाऊँगा, मगर गाड़ी जरा सँभलकर चलाओ, बचनसिंहजी।"

बचनसिंह को मेरी सलाह पसन्द नहीं आयी, बोला, "आप भी कमाल करते हो बाबूजी, एहतियात तो हर टैक्सी ड्राइवर के लिए जरूरी है। ऐक्सीडेंट हो गया तो आपका क्या जायेगा, ज्यादा-से ज्यादा एक टाँग टूट जायेगी। मगर मेरी तो टैक्सी टूट जायेगी और हजारों का नुकसान अलग होगा और लाइसेंस अलग जब्त होगा और रोजगार से भी जायेंगे। अपने लिए तो बड़ी मुसीबत है। इसलिए मैं हमेशा टैक्सी बहुत सँभाल कर चलाता हूँ। ओहो, यह गुजराती सेठ का ड्राइवर बड़ा पाटेखाँ मालूम होता है। मेरी गाड़ी को आपके सामने, देखा आपने, ना, ना साफ कहिये, आपके सामने इसने ओवरटेक किया कि नहीं मेरी गाड़ी को ? मैं इसको ऐसे निकल जाने दूँगा साले को ? समझता क्या है वे तू, बचनसिंह से गाड़ी बढ़ाकर आगे ले जायेगा ?"

यह कहकर बचनसिंह ने ऐक्सीलेटर पर जो पाँव रखा तो झूम से आगे बढ़कर गुजराती सेठ की गाड़ी के साथ साथ आ गया। अब दोनों गाड़ियाँ साथ-साथ चल रही थीं—बचनसिंह की टैक्सी और गुजराती सेठ की गाड़ी। और बचनसिंह के मुँह से फूल झड़ रहे थे।

"क्यों बे मडरासी !" बचनसिंह गुजराती सेठ के ड्राइवर से कहने लगा, "तेरी पीयाट के मडगार्ड मे त्रिचनापल्ली मारूँ, रॉंग साइड से ओवरटेक करता है !"

"क्या बकता है," दक्षिण भारत का रहनेवाला ड्राइवर भी तैश खाकर बोला, "रॉंग-साइड से तुम ओवरटेक किया मेरी गाड़ी को दो बार, और दो बार हम चुप रहा, मगर हम भी ड्राइवर है कोई हज्जाम नहीं है। जासती लफड़ा करेगा तो तेरी मारिस का मुँह तोड़ के लुधियाना बना देगा।"

इसके बाद बचनसिंह ने निहायत नफीस पंजाबी में नोक-पलक से दुरुस्त ऐसी गाली दी जो मद्रासी ड्राइवर के दिल में घुसकर उसकी सात

पुरुषों पर हमला कर गयी। जवाब में दूसरे ड्राइवर ने जो अपने मुंह की मशीनगन खोली तो दिल्ली से अमृतसर तक पूरी पंजाबी कौम का सफाया कर दिया। साथ-साथ दोनों ही गाड़ियों की रफ्तार भी तेज होती गयी। बड़ी महारत से दायें-बायें की गाड़ियों, लारियों, ट्रकों से बचते हुए ये दोनों ड्राइवर एक-दूसरे को गालियाँ देते साथ साथ चलते रहे। दोनों गाड़ियों के बीच सिर्फ छ-सात इंच का फासला था। स्टीयरिंग-व्हील की एक जरा-सी गलत हरकत पर, पचास मील की रफ्तार पर चलनेवाली गाड़ियाँ एक-दूसरे से टकरा सकती थीं।

उधर गुजराती सेठ का चेहरा फक् था इधर मेरा दिल धक् था और हम दोनों खामोशी से एक-दूसरे का चेहरा देख रहे थे। बाँद्रे का चौक गुजर गया। बाँद्रे की मस्जिद गुजर गयी। दोनों गाड़ियाँ माहिम कॉज़ पर दौड़ती हुई चेक-नाके के करीब होती गयीं। नाके के बिलकुल करीब जाकर सड़क के दो हिस्से हो जाते हैं, एक हिस्से पर सिर्फ प्राइवेट गाड़ियों को गुजरने की इजाजत थी, दूसरे से लारियाँ, बसें और टैक्सियाँ गुजरती थीं। मद्रासी ड्राइवर गालियाँ बकता हुआ अपने रास्ते पर चला गया।

बचनसिंह ने टैक्सी स्लो करते हुए मुझसे कहा, "साला भाग गया, देखा आपने!"

मैंने हँसने की कोशिश की मगर मेरे गले से एक ऐसी आवाज़ निकली जो सिर्फ मरने से पहले किसी आदमी के गले से निकल सकती है।

चेक-नाके पर पुलिस के संतरी ने बचनसिंह से पूछा, "क्या रे, बचनसिंह! क्या माल है तेरी गाड़ी में!"

"एक दर्जन बोतलें ठर्रे की डिक्की में रखी हैं," बचनसिंह कहकहा मारकर बोला, "और एक नौ-टाँक मेरे सेठ ने पी रखी है और दो नौ-

ठोंक मैंने। यकीन न आये तो सूँघकर देख ले।"

संतरी जोर से हँसा, "जा, जा मखोलरी करता है, मगर कभी तू पकड़ा जायेगा, बचनसिंह।"

हाथ हिलाकर संतरी ने रास्ता दे दिया। बचनसिंह फर्राटे से गाड़ी निकाल कर माहिम बाजार में ले आया और सीधा शिवाजी-पार्क जाने के बजाय खोदा गली में घुस गया।

"इधर कहाँ जाता है!" मैंने घबराकर पूछा।

"बस एक मिनट का काम है यहाँ।" बचनसिंह ने एक गंदे छप्परे के करीब अपनी गाड़ी रोक कर उतरते हुए कहा।

गाड़ी से उतरकर उसने दो बार हॉर्न बजाया। छप्परे में से बनियाइन और पतलून पहने हुए सफेद बालोंवाला एक बुड्ढा निकला। उसके गले में एक छोटी-सी सलीब लटकी हुई थी।

डिक्की खोलकर बचनसिंह ने उसके हाथ में भूरे रंग का एक बड़ा थैला थमाया। जब बूढ़े ईसाई ने उस थैले को अपने हाथ में लिया तो थैले के अन्दर से बोतलों के टकराने की आवाज आई।

"पूरी बारह हैं।" बचनसिंह ने मुस्कराकर कहा।

बुड्ढे ईसाई ने अपनी जेब में हाथ डालकर बड़ी राजदारी से उसे बचनसिंह के हाथ की तरफ बढ़ाया। दोनों हाथ एक-दूसरे से पुराने दोस्तों की तरह बगलगीर हुए, फिर बचनसिंह का हाथ जल्दी से उसकी जेब में चला गया और बुड्ढे ईसाई का हाथ पतलून के बाहर ही रहा। जल्दी से बचनसिंह ने गाड़ी में बैठकर उसे स्टार्ट किया और खोदा गली से दर्शन लेन से होकर कैडिल-रोड पर होकर इसी निशान से शिवाजी-पार्क के चौक पर आ गया। दस मिनट का रास्ता था जो उसने दो मिनट में तय किया होगा।

इसके बाद वह मुझसे बोला, "कभी-कभी सच बोलने में बड़ा

फायदा हो जाता है। वह सिपाही मेरे सच को झूठ समझा और गच्चा खा गया, हा, हा, हा! किधर से ले चलूँ, खुदादाद सर्कल से या पोर्चुगीज चर्च से!" फिर मेरे जवाब का इन्तजार किये बिना खुद ही बोला, "उधर दादर से जे० जे० अस्पताल तक बड़ी गर्दी रहती है इसलिए पोर्चुगीज चर्च से चलता हूँ, रास्ता भी खुला मिलेगा और—"

मैंने उसे टोककर जरा सख्ती से कहा, "जिधर रास्ता खुला मिले उधर से चलो, मगर जरा सँभाल कर चलो।"

"सँभाल कर चलना तो जरूरी है", बचनसिंह बड़ी संजीदगी से बोला, "और टैक्सी तो मैं ऐसी सँभाल कर चलाता हूँ कि दूसरे ड्राइवर मेरा मजाक उड़ाते हैं। बोलते हैं बचनसिंह, तू तो बिल्कुल चूहे की तरह डरपोक है।"

मैंने दिल में सोचा अगर यह ड्राइवर चूहा है तो शेरों की रफ्तार का क्या आलम होता होगा। मगर मैंने उससे कुछ नहीं कहा। बचनसिंह जरा संजीदा होकर चालीस की रफ्तार से टैक्सी चला रहा था। इत्तफाक से उसे रास्ते में कोई मोटर, गाड़ी या लारी भी नहीं मिली जिसे वह ओवरटेक करनेकी कोशिश करता। उसने अपने दोनों हाथ कुछ देर के लिए स्टीयरिंग व्हील से उठा लिये और सामने के आईने को तिरछा करके उसमें से देखकर अपने दोनों हाथों से अपनी पगड़ी ठीक करने लगा। सामने से एक बड़ा ट्रक चला आ रहा था। करीब आ रहा था। करीब आ गया। बिल्कुल करीब आ गया।

अचानक मैंने चीखकर कहा, "अरे क्या करते हो! क्या करते हो!"

बचनसिंह ने बड़ी फुर्ती से व्हील घुमाया, ट्रक एक फुट के फासले पर दहाड़ता हुआ करीब से गुजर गया और सारी जमीन काँप उठी। मेरे चेहरे से पसीना फूट पड़ा। मैंने जेब से रूमाल निकाला और अपने चेहरे को साफ करने लगा।

बचनसिंह हँसकर बोला, और उसकी आवाज में थोड़ी हिकारत भी थी, "बाबूजी, आज मरना, कल मरना, फिर मरने से क्यों डरना ? अगर आयी होगी तो घर पर बैठे-बैठे मर जाओगे, नहीं तो यह टैक्सी तो क्या पहाड़ से कूद पड़ोगे तो भी बच जाओगे।" बचनसिंह ने यह कहकर गाड़ी की रफ्तार साठ मील कर दी और लहक-लहककर गाने लगा—

"वलों दा लक पतला"

मैंने दिल में सोचा सिर्फ वलों की कमर ही पतली नहीं है, अपनी किस्मत भी बिल्कुल पतली बल्कि न होने के बराबर दिखाई देती है। किसी तरह इस टैक्सी-ड्राइवर से जान बच जाये तो साईं बाबा के चरणों में ग्यारह रुपये का चढ़ावा चढ़ाऊँगा।

अचानक बचनसिंह ने गाड़ी की रफ्तार एकदम हल्की कर दी। हैरत का एक दूसरा झटका मुझे लगा। वह मेरी तरफ मुड़कर बोला, "आपने देखा ?"

"क्या ?"

"वह ओल्ड मोबाइल जो पीछे रह गयी, उसमें !"

"क्या था ?"

"था नहीं, थी।"

"क्या थी ?" मैंने बिल्कुल अनजान होकर पूछा। वैसे भी झटके खाते-खाते मेरे दिमाग में मौत के सिवा और किसी चीज का ख्याल बाकी न रह गया था।

"लड़की !" बचनसिंह ने मुझे आँख मारकर कहा, "देखिये, वह अब मुझे ओवरटेक करेगी, गौर से देखिये।"

मैंने गौर से देखा, एक लड़की थी, एक गाड़ी थी, दोनों एक-दूसरे में गड्ड-मड्ड थे।

"उम्दा माल है", बचनसिंह ने चटखारा भरते हुए
माडल की शेवरलेट मालूम होती है।"

"तुम गाड़ी के बारे में बात कर रहे हो?" मैंने पूछा।

"नहीं, मैं तो लड़की के बारे में बोलता हूँ," बचनसिं
मारकर कहा। "मालूम होता है आपने गौर से नहीं देखा
फिर आपको दिखाता हूँ।"

यह कहकर वह गाड़ी को रेस करके फिर आगे ले ग

अब उसकी गाड़ी लड़की की गाड़ी के साथ-साथ
लड़की ने एक क्षण के लिए सामने से निगाह उठाकर
नखरे से देखा जैसे कोई बढ़िया नस्ल की पोमेरियन
कुत्तों की तरफ देखती है। फिर उसकी गाड़ी आगे निक

"है न फर्स्ट-क्लास?" बचनसिंह ने मुझसे पूछा।

"इकदम हाई-क्लास," मैंने हामी भरी।

"उसके पीछे-पीछे चलें?" बचनसिंह ने मुझे मशी

"अरे नहीं भाई", मैंने एकदम घबराकर कहा
स्माल-काजेज कोर्ट पहुँचना है नहीं तो मकान
लेगा।"

बचनसिंह ने अपनी घड़ी देखकर कहा, "अभी
चालीस मिनट हैं, जब तक तो हम इस लड़की क
वापस बोरीबन्दर पहुँच सकते हैं, हिम्मत कर जाओ,"

"अरे नहीं भाई, तुम सीधे चलो इस वक्त,"
होकर कहा, "तुम्हें लड़की की पड़ी है, यहाँ जा
देखो गाड़ी धीरे चलाओ, बिल्कुल धीरे", मैंने क
अदालत में पाँच-दस मिनट देर से पहुँचेंगे मगर प

हिलाकर बड़े अफसोस से बोला, "तुम्हारी मरजी सेठ, नहीं तो ऐसी लड़की बम्बई में तो अब नहीं मिलेगी। मेरी टैक्सी लेकर दस दिन ढूँढ़ोगे तो भी नहीं मिलेगी। क्या स्ट्रीमलाइन बाडी है उसका, क्या पालिश है! एक बार उठाकर गियर में डालो तो यहाँ से नरीमान प्वाइण्ट तक पेट्रोल के बिना चलती चली जाये।"

"मुझे किसी लड़की का पीछा नहीं करना है, बचनसिंह", मैंने झुँझलाकर कहा, "किसी तरह तुम मुझे वक्त पर स्माल-काज़ेज कोर्ट पहुँचा दो तो मैं तुम्हें दो रुपये इनाम दूँगा नहीं तो टैक्सी रोककर यहीं मुझे छोड़ दो।"

"साहब, आपका नमक खाया है कितनी बार, ऐसे कैसे छोड़ूँगा आपको!" बचनसिंह ने बड़े भरोसे के साथ मुझसे कहा, "आपको स्माल-काज़ेज कोर्ट और फिर कोर्ट से घर छोड़ के आयेगा भाण्डुप में।"

"मैं भाण्डुप में नहीं रहता, मैं भाण्डुप में नहीं रहता। मेरी सात पुश्तों से आज तक कोई भाण्डुप में नहीं रहा," मैंने दाँत पीसकर कहा।

बचनसिंह ने एकदम मेरी तरफ से मुँह मोड़ लिया और गाड़ी की रफ्तार तेज करके लड़की की गाड़ी से आगे निकल गया और भायखला की तरफ जाते हुए उसने दर्जनों गाड़ियों, लारियों, ट्रकों को गर्द की तरह पीछे छोड़ दिया। एक बार भी उसने मुड़कर मुझसे बात नहीं की। अब वह यकीनन मुझसे नाराज था और मैं उससे। भायखला के करीब पहुँचकर मैंने टैक्सी-स्टैण्ड की तरफ निगाह दौड़ायी, मगर मुझे कहीं टैक्सी नजर न आयी नहीं तो मैं फौरन उतरकर दूसरी टैक्सी ले लेता।

बदकिस्मती से उस वक्त सुबह का वक्त था, यानी दफ्तरों और कारखानों और अदालतों में जाने का वक्त था। ऐसे मौके पर दूसरी टैक्सी कहाँ से मिलेगी! मैं निराश होकर उसी टैक्सी के अन्दर जल्ता-

सुनता टेक लगाकर बैठ गया।

मायखला के चौक पर बड़ी भीड़ थी। हमारी टैक्सी के आगे गाड़ियों और लारियों का एक हुजूम था। एक तरफ़ ट्राम का पट्ठा था, दूसरी तरफ़ वेस्ट की बसों की एक लम्बी कतार थी। बीच में रास्ते की एक पतली-सी सुरंग बन गयी थी, इतनी पतली कि उसमें से किसी छोटी-से-छोटी टैक्सी का गुजरना भी मुश्किल था। कुछ देर तक तो बचनसिंह आगेवाली टैक्सियों और गाड़ियों को हार्न-पर-हार्न देता रहा और अपनी सीट पर बैठे-बैठे कसमसाता रहा, फिर उसने एकदम बड़ी फुर्ती और चतुराई से गाड़ी जरा घुमाकर और लाइन से बाहर निकालकर सुरंग के अन्दर डाल दी।

मेरे दोनों तरफ़ दाँयें-बाँयें भीमकाय ट्रामें और बसें खौफनाक अन्दाज़ में घड़घड़ाती हुई गुजर रही थीं। इस सुरंग में हमारी टैक्सी एक छोटी-सी च्यूँटी की तरह भागती हुई मालूम हो रही थी। एक तरफ़ ट्राम से और दूसरी तरफ़ बस से बचकर भागते हुए ऐसा लगता था जैसे मेरी टैक्सी में और ट्राम या बस में सिर्फ़ छ इञ्च का फासला रह गया है। सिर्फ़ चार इंच का फासला रह गया है। कोई फासला नहीं रह गया! अब ऐक्सीडेंट होगा, अब ऐक्सीडेंट होगा। डर के मारे मेरे सर के बाल खड़े हो गये और सारे शरीर से पसीना छूटने लगा।

अचानक बचनसिंह एक वहशियाना खुशी से चिल्लाया। वह उस तंग-सी सुरंग से अपनी टैक्सी को सही-सलामत निकाल लाया था और सारी बसों, ट्रामों और टैक्सियों और लारियों से आगे निकलता हुआ अपनी टैक्सी को जे० जे० अस्पताल की तरफ़ भगाता हुआ ले जा रहा था।

"देखा आपने!" बचनसिंह अपनी सारी नाराजगी भूल गया और विजय-गर्व से मेरी तरफ़ देखकर बोला, "देखा आपने!"

मैंने तो देखा, लेकिन उसने नहीं देखा कि बॉयें तरफ से रेल्वे इंस्टीच्यूट के ऊपर के पुल से एक ट्रक बड़े जोर से पीं-पीं करता साइड से चला आ रहा है। मैंने चिल्लाकर कहा, "ब्रेक लगाओ, ब्रेक लगाओ," और खौफ से अपनी आँखें बन्द कर लीं।

* * *

जब मैंने आँखें खोलीं तो लोग मुझे एक स्ट्रेचर पर लिटाकर अस्पताल के अन्दर ले जा रहे थे। मेरे साथ-साथ दूसरे स्ट्रेचर पर बचनसिंह बहुत बुरी तरह जख्मी पड़ा था। जगह-जगह उसके शरीर से खून बह रहा था।

मुझे देखकर बोला, "बाबू, तेरी गलती से एक्सीडेंट हो गया। अगर मैं ब्रेक न लगाता तो साफ अपनी टैक्सी को लारी से पहले भगाकर ले गया होता," फिर अस्पताल के अर्दलियों की तरफ देखकर बोला, "देखते क्या हो? तेज-तेज चलो, देखते नहीं हो बाबू का स्ट्रेचर हमको ओवरटेक कर रहा है।"

●

काले पुल के वासी

सूरदास और महादेव काले पुल के नीचे से गाते हुए और ढोलक बजाते निकले और भायखला के नुक्कड़ पर आये। सूरदास के हरि-भजन में बला का दर्द था और महादेव की ढोलक की थाप में एक अजब चमक थी। दोनों बाप-बेटे मिलकर समाँ बाँध देते थे। सुबह भायखला के नुक्कड़ से पैदल चलकर शाम तलक जुहू समुद्र के किनारे पहुँच जाते। जुहू पर उन्हें खासी रकम मिल जाती थी। हालाँ कि रास्ते में लालबाग, परेल और शिवाजी पार्क में भी कुछ नुक्कड़, कुछ गलियाँ और बाजार ऐसे थे जहाँ उन्हें खासी आमदनी हो जाती थी मगर जुहू इस मामले में बेहतरीन जगह थी। उनके सुननेवालों में आम तौर पर बुड्ढे और औरतें होती थीं, क्योंकि वे केवल हरि-भजन गाते थे, इसलिए बच्चे और जवान जो फिल्मी गीतों के शैदाई थे और "जुवाने यारे-मन तुर्की" और "याहू" का नारा लगाते थे, उन्हें कैसे पसंद कर सकते थे?

सूरदास की आवाज में बुढ़ापे के बावजूद एक अजब खटक थी। बड़ी ही रोशन आवाज थी, जैसे चारों ओर आँखें खोल-खोलकर दुनिया का नजारा कर रही हो। प्रकृति ने सूरदास से आँखें छीनकर मानो

उसकी आवाज को आँखें दे दी थीं। वह जैसे आवाज से लोगों का दिल टटोल लेता था और कभी-कभी उनकी जेबें भी।

उसका बेटा दोहरे बदन का मजबूत काठी का तगड़ा जवान था। अपने चौड़े सीने पर ढोलक लटकाये हुए जब वह अपने बाप के साथ कभी-कभी कोई तान उठाता और तुले हुए मजबूत हाथों से ताल देता तो बेहद भला मालूम होता। महादेव की ताल में जिन्दगी की बेचैनी और जवानी का नशा दोनों मौजूद थे और जब कभी वह पलटा मारकर तान उठाता तो अपने बाप की दर्द-भरी मिठी आवाज के ऊपर उसकी आवाज यूँ गूँजती जैसे समुद्र की लहरों पर उकाब पर फैलाये डोल रहा हो।

सूरदास और महादेव भायखला के नुक्कड़ से चलकर चिड़ियाघर के दरवाजे तक पहुँचे। वहाँ से पारसियों की नुक्कड़ पर आये जहाँ उनके शैदाई कुछ बुड्ढे पारसी उस वक्त हमेशा उनके इन्तजार में जमा रहते थे। वहाँ से होकर वे दोनों लालबाग और परेल की गलियों में घूमते रहे। दादर में सिर्फ हिन्दू-कॉलोनी ऐसी जगह थी जहाँ उन्हें कुछ पैसे मिल जाते थे। *शिवाजी पार्क उनके लिए अलबत्ता बड़ी उपजाऊ जगह थी।* दोपहर के करीब वे माहिम में सिन्धियों के मन्दिर के बाहर पहुँच जाते। यहाँ बहुत-सी सिन्धी औरतें उन्हें घेर लेती थीं और उन्हें एक पैसा दो पैसा देकर उनमें हरि-भजन सुनती थीं। आगे माहिम की दरगाह का इलाका था। यहाँ हरिभजन की क्या गुंजाइश थी। यहाँ तो सलाम, नात और कव्वाली का जोर था, इसलिए सूरदास और महादेव दोनों जल्दी जल्दी माहिम का नाका पार करके माहिम-क्रीक क्रॉस करके बांद्रा पहुँचते जहाँ चौक में बांद्रा मस्जिद थी और तिक्के कबाब और शीशवालों की दुकानें थीं। इसलिए यह इलाका भी सूरदास और महादेव के भूगोल में बंजर इलाका कहलाता था। फिर बांद्रा

टाकीज से लीडो सिनेमा तक, यानी बाँद्रे से सांताक्रूज तक फिल्मी इलाका था जहाँ न हरि-भजन, न सलाम, न नात, न कव्वाली, न कीर्तन। यहाँ हर दुकान पर रेडियो सीलोन बजता था और हर खिड़की से "ऐ गुल बदन, ऐ गुल बदन," "ईना मीना डीका, डाया डाया डीका," "तेरी नजरों ने ऐसा काटा, दो टुकड़ों में दिल मेरा बाँटा, ओ वैरी अब तो न कर टा टा," ऐसे हाहाकार सुनाई देते थे। इन गीतों के सामने मीराँबाई, सूरदास और तुलसीदास के गीतों की क्या हैसियत थी।

इसलिए उन तमाम बंजर और वीरान इलाकों से दोनों बाप बेटे खामोशी और कुछ बोझल उदासी से गुजर कर जब जुहू पहुँचे तो उनकी जान में-जान आयी। जुहू पर भी हालाँ कि ज्यादातर वे फिल्मों और नौजवानों की भीड़ थी, मगर औरतें तादाद में खासी थीं और इक्का-दुक्का बुड्ढे भी मिल जाते थे और फिर जुहू के समुद्र-तट पर हर आदमी खुले, रोशन और उदार मूड में होता है इसलिए, भेल-पूरी, दही-बड़े की चाट और मूँग के नमकीन लड्डू खाते-खाते जेब में हाथ डालकर करीब से किसी गाते हुए बुड्ढे को पाँच पैसे थमा देना कोई बड़ी बात नहीं मालूम होती। दान, दान नहीं, बल्कि जिंदगी का शुकराना मालूम होता है।

मगर बुड्ढा सूरदास अपने आपको भिखारी नहीं समझता था। वह बड़ा स्वाभिमानी और अक्खड़ बुड्ढा था, इसलिए जब जुहू के तट पर अपनी कार खड़ी करके एक सेठिये ने कार की खिड़की से सर निकाल कर अपनी गोद में बैठे हुए बच्चे से कहा, "बेटा, इस अंधे भिखारी को पाँच पैसे दे दो।" तो सूरदास ने जल्दी से अपना हाथ पीछे खींच लिया और बोला, "सेठ, मैं अन्धा जरूर हूँ पर भिखारी नहीं हूँ। रोज सुबह आठ बजे से रात के आठ बजे तक बारह घंटे गीत गाता हूँ, लोगों का

दिल बहलाता हूँ तब चार पैसे कमाता हूँ। यह भीख नहीं है, मेरे गीतों की कमाई है।"

कारवाले सेठ ने लज्जित होकर कहा, "मुझसे भूल हो गयी, सूरदासजी! यह लो अपने गीतों की मजूरी।"

यह कहकर सेठ ने पाँच पैसे बुड्ढे सूरदास की हथेली पर रख दिये और बुड्ढा उसे दुआएँ देने लगा। बुड्ढा अभिमानी जरूर था मगर दिल का बुरा नहीं था।

* * *

आठ बजे के बाद जब बच्चेवाली औरतों और घर-गृहस्थीवाले मर्दों की भीड़ छँट गयी और जुहू के तट पर इक्का-दुक्का इश्क करनेवाले जोड़े रह गये तो बाप-बेटे ने वापस चलने की ठानी। प्रेमियों के इन जोड़ों के सामने हरि-भजन करना ऐसा ही है जैसे भैंस के आगे बीन बजाना। इसलिए बाप-बेटे जुहू से पैदल सांताक्रूज रवाना हुए और वहाँ से लोकल ट्रेन में बैठकर वापस अपने घर पहुँचे।

उनका घर भायखला के पास रेलवे पुल के नीचे था। यह एक बहुत बड़ा और पुराना पुल था, जिसकी मेहराबों के नीचे से रेल की कई पटरियाँ गुजरती थीं और ऊपर सीने पर ट्राम का पट्टा घूमता था और मोटरें और बसें दनदनाती थीं। यह शहर का सबसे पक्का और सबसे पुराना पुल था। उसकी मेहराबों का पलस्तर इंजन के धुएँ और जमाने के जंग से काला और सख्त हो चुका था। मेहराबों की छतें भी काली थीं और पुल के पत्थर भी काले पड़ गये थे। इसी वजह से उस पुल के नीचे रहनेवाले लोग उस पुल को काला पुल कहते थे।

इस काले पुल के नीचे कौन लोग रहते थे? इस काले पुल के नीचे वे लोग रहते थे जिन्हें आसमान की मेहराब के नीचे कोई पनाह न मिली और जिन्दगी की मेहराब के नीचे कोई इज्जत न मिली और थोड़े

की मेहराब के नीचे कोई दौलत न मिली। इसलिए वे लोग जो गरीबों में सबसे गरीब थे और नीचों में सबसे नीच थे और शामत के मारों में सबसे ज्यादा शामत के मारे थे, इस काले पुल के नीचे पनाह ढूँढ़ते हुए आ गये थे। यहीं पर बुड्ढा सूरदास और उसका बेटा महादेव रहते थे। रेलवे-लाइन से इधर लोहे के जंगले और पुल की मेहराब के बीच कोई दो-ढाई सौ फुट लम्बी और एक सौ फुट चौड़ी सुरक्षित जगह थी, जहाँ न बारिश का गुजर था, न धूप का, न सरदी का, न किसी मालिक-मकान के किराये का, इसलिए सूरदास और महादेव के लिए और मुहम्मद दीन मिस्त्री के लिए और गुरबचनसिंह चपरासी के लिए, और फजलू बूट-पालिशवाले के लिए और मोदू डबल रोटी बेचनेवाले के लिए और मोंडूराम चनेवाले के लिए और शामू गिरह-कट के लिए और जार्ज ठर्रेवाले के लिए, और भीखू दलाल के लिए इससे बेहतर शरण की कल्पना भी न की जा सकती थी।

फिर दो बुड्ढी औरतें थीं, बसन्ती और जनियाबाई, जो जवानी में पेशा करती थीं और अब बुढ़ापे में भीख माँगती थीं। सड़कों और कूड़े-करकट के ढेरों से रद्दी इकट्ठी करनेवाला जुगवा था, उसकी चेचकरू बीवी मँगता थी और उनकी नौजवान लड़की मुगना थी। सब्जी बेचनेवाली तोराँ थी और एक विद्यार्थी भी था जिसका नाम विद्यार्थी था और जो अक्सर रातों को काली मेहराब से जरा बाहर बिजली के खम्भे की रोशनी में अपनी किताब के ऊपर झुका हुआ पाया जाता था।

ये और दूसरे कई ऐसे लोग थे जो इस काले पुल के नीचे रहते थे और जैसे सबकी मौत का एक दिन मुअय्यन (निश्चित) है उसी तरह उनमें से हर आदमी की जगह इस मेहराब के नीचे निश्चित थी। उनमें हर आदमी की अपनी भूख थी, अपने फटे-चीथड़े थे और गली-सड़ी एक पोटली थी जिसमें हर आदमी रात को सबकी नजरों से बचाकर

पनी गरीबी गिनकर और बाँधकर अलग से रख देता था और फिर से अपने सिरहाने रखकर सो जाता था।

थके-हारे सूरदास ने काले पुल के नीचे आकर अपना शरीर ढीला छोड़ दिया और अपनी जगह पर बैठकर मेहराब से टेक लगाकर कहा, "महादेव, बीड़ी लाये हो?"

"बापू, तुम आज दिन में चार आने की बीड़ी पी चुके हो।" महादेव ने कहा।

सूरदास ने बेहद थकन से चूर होते हुए कहा, "अरे, एक बीड़ी दे दे, बेटा।"

महादेव ने बड़ी सख्ती से कहा, "नहीं है।"

सूरदास बोला, "नहीं है, तो ला दे। तलब हो रही है।" फिर वह आह भरकर बोला, "बड़े लोगों की तफरीह बड़ी होती है, होटल है, शराब है, डांस है, पर गरीब का तो एक ही सहारा है—बीड़ी।"

महादेव ने अचानक अपनी जेब से बीड़ी का पूरा बंडल निकाला और उसे जोर से सूरदास की गोद में फेंक दिया और झुँझलाकर बोला, "लो पीओ, सारा बंडल पी जाओ।"

काँपते हुए हाथों से सूरदास ने बीड़ी का बण्डल खोला, बण्डल खोलकर एक बीड़ी निकाली, उसे अपने नाखून की नोक से ठीक करके मुँह में रखा और दियासलाई जलाकर उसे सुलगाया और फिर जोर से एक कश लेकर उसने अपनी आँखें बंद कर लीं और सर मेहराब की दीवार से टिका दिया और बीड़ी का धुँआ धीरे-धीरे हवा में छोड़कर बोला, "हाँ! यह बीड़ी का सुट्टा। दिन भर की थकन के बाद बिलकुल स्वर्ग का झोंका मालूम होता है। (अपने बेटे से) तुम एक सुट्टा लेकर तो देखो, महादेव।"

"ऊँह! मुझे बिलकुल अच्छा नहीं लगता।" महादेव झल्लाकर

बोला।

"क्या अच्छा नहीं लगता?" सूरदास ने जरा खफा होकर पूछा।

"न तुम्हारी बीड़ी, न अपनी गरीबी, न यह मनहूस काला पुल जिसके नीचे हम अपनी मनहूस काली जिन्दगी गुजारते हैं।" महादेव बेहद कटुता में बोला और अचानक अपनी मुट्ठियाँ भींचकर जोर-जोर से काले पुल की दीवार पर मारने लगा और उसके स्वर की कटुता और झल्लाहट बढ़ती ही गयी। "इस काले पुल की काली-काली दीवारें कितनी मजबूत और भारी हैं। मेरी किस्मत की तरह कभी अपनी जगह नहीं बदलतीं। कभी अपनी जगह से नहीं हिलतीं। क्या मजाल जो कभी एक इंच भी यह पुल अपनी जगह से हिल जाये। यह मनहूस काला बदबूदार पुल!"

महादेव अपने मजबूत मुक्कों की मार से खुद ही बिलबिला उठा और अपना सर अपनी दोनों बाहों में लेकर सिसकने लगा।

सूरदास ने अपने बेटे के सिसकने की आवाज को यूँ सुना जैसे दूर ऊपर पुल के सीने पर से गुजरनेवाली किसी मोटर की आवाज को कोई यहाँ नीचे से सुनता है। हालाँ कि यह बड़ी जोर की आवाज थी। उसके अपने सीने में गुजरती थी। और उसे अपना बाप याद आ गया जो इस पुल के नीचे रहता था, और अपने बाप का बाप। वह भी इसी पुल के नीचे रहता था। फिर उसे अपनी माँ याद आयी जिसने उसे इस पुल के नीचे जन्म दिया था और फिर उसे अपनी स्वर्गीया पत्नी की याद आयी, जिसने महादेव को इस पुल के नीचे जन्म दिया था और उसने सोचा, यह पुल तो अटल है, एक ही जगह पर ठहरा हुआ है। कभी न हिलनेवाला है। यह पुल जो उनकी जिन्दगियों में एक अँधेरी दीवार की तरह खड़ा है और गरीबी की तरह उन्हें उत्तराधिकार में दिया गया है। इस उत्तराधिकार से वे कैसे इनकार कर सकते हैं। यह उत्तराधिकार तो अटल है।

"तो जो चीज संसार में अटल है उसका गम रोकर दूर नहीं करते, बेटा !" सूरदास अपने सिसकते हुए बेटे को समझाने लगा, "उसका दुख थोड़ा-सा इन बीड़ी से दूर होता है और बहुत-सा हरि-भजन से।"

* * *

आधी रात के अकेलेपन में पुल पर से गुजरनेवाले किसी अखबार बेचनेवाले छोकरे की आवाज गूँजी।

"चीन ने हिन्दुस्तान पर हमला कर दिया।"

"चीन की धोखेबाजी।"

"हिन्दुस्तान की सरहद पर अचानक हमला।"

"फ्री-प्रेस स्पेशल बुलेटिन।"

दौड़ते हुए छोकरे की आवाज अँधेरे में डूब गयी और किसी ने उसकी आवाज को नहीं सुना क्योंकि सब लोग सो रहे थे। मेहराब के ऊपर और मेहराब के नीचे...।

* * *

दूसरे दिन की सुबह बेहद चमकीली और सुहावनी थी। बुड्ढे सूरदास की आवाज भी बेहद मीठी और दर्द की लय में डूबी हुई थी। महादेव की ढोलक की थाप भी करारी और पुख्ता थी।

नुक्कड़ की भीड़ उसी तरह गुजर रही थी। बसों के क्यू उसी तरह लम्बे थे मगर आज भायखला के नुक्कड़ पर उन्हें सिर्फ दस पैसे मिले। हालाँ कि भायखला के पुल से हमेशा अच्छी बोहनी होती थी। चार-छः आठ आने रोज मिल जाते थे।

"क्या बात है !" सूरदास ने पूछा, "आज लोग देते नहीं !"

"जाने क्या बात है !" महादेव ने बड़ी निरीहता से सर हिलाकर कहा।

ये दोनों अपनी गरीबी में इतने डूबे हुए थे कि उन्हें दुनिया की

कोई खबर ही न थी। खबर मालूम करने की कोई इच्छा भी न थी। वे लोग गीत गाते हुए चलते रहे और हर एक चौक और नुक्कड़ पर उन्हें पहले से बहुत कम पैसे मिलते रहे। कई जगहों से तो एक पैसा भी न मिला और वे लोग अपनी गरीबी की एक-एक पाई को सँभाल-सँभालकर गिनते हुए अपने अंधे वातावरण में गिरफ्तार भायखला से जुहू आ गये। अब तक सिर्फ एक रुपया तीन पैसे हुए थे जब कि जुहू तक पहुँचते-पहुँचते दो-ढाई रुपये हर रोज हो जाते थे और वे कुछ समझ न सके कि माजरा क्या है!

जुहू पर गीत गाते-गाते महादेव ने इशारे से सूरदास को एक आदमी के सामने खड़ा कर दिया जिसकी गोद में नारंगी फ्राक पहने हुए, बालों में बसंती रिबन लगाये एक लड़की बैठी थी। बच्ची के बाप ने अपनी जेब से पाँच पैसे का एक सिक्का निकालकर अपनी बेटी के हवाले किया और उससे कहा, "ये पाँच पैसे सूरदास को दे दो।"

लड़की ने बड़े ज़ोर से इनकार में सर हिलाया और बोली, "नहीं, मैं ये पाँच पैसे डिफेंस फंड में दूँगी, पापा। तुमको मालूम नहीं है चीन ने हमारे देश पर हमला कर दिया है!"

अचानक लोहे का डिब्बा जिसमें सूरदास अपने पैसे जमा किया करता था उसके हाथ से छूट गया और सारे सिक्के रेत में जा गिरे। बुड्ढा सूरदास आश्चर्य से अपना मुँह खोले अपनी अंधी फटी-फटी आँखों से हवा में घूरता रह गया। महादेव झुककर जमीन से पैसे उठाने लगा। उस रात वे सब लोग काले पुल के नीचे विद्यार्थी के चारों ओर जमा हुए और उसकी बातें सुनकर एक अजीब भावना उन सबके मन में उभरने लगी और वे लोग धीरे-धीरे महसूस करने लगे कि निराशा और गरीबी, भूख और बेकारी, लाचारी और नादारी के बावजूद उनके पास लोहे का एक जँगला है, रेल की एक लाइन है, पत्थर का एक पुल

है जिसे उन्हें बचाना है। और इस रेलवे लाइन, लोहे के जँगले, पत्थर की मेहराब से परे दूर और सैकड़ों-हजारों मीलों तक फैला हुआ उनका एक देश है जिसकी तकदीर को सिर्फ वही लोग मिलकर बदल सकते हैं। विद्यार्थी कह रहा था, "हमारा देश हमेशा शान्ति चाहता रहा। हमारे देश ने आज तक किसी देश पर हमला नहीं किया। हमारी सभ्यता संसार की सबसे बड़ी और सबसे पुरानी शान्ति की सभ्यता रही है। हमारे देश ने हमेशा चीन की ओर दोस्ती का हाथ बढ़ाया है, लेकिन आज हमारे हाथ बंदूक की गोलियों से छलनी कर दिये गये हैं। आज चीन ने विश्वासघात किया है। तलवार उठाकर चीन और हिन्दुस्तान की दोस्ती को हमेशा के लिए खत्म कर दिया है। कुछ भी हो जाये, सम्भव है सुलह हो जाये, लड़ाई हो जाये मगर अब वह मुहब्बत कभी नहीं होगी। मुहब्बत का वह नाजुक और खूबसूरत नाता अब सदा के लिए खत्म हो चुका है। अब चाहे चीनी झूठी सुलह की बातें करें या भयानक युद्ध की, हम किसी हालत में उस पर भरोसा नहीं कर सकते। अब हमें हर हालत में अपने आपको मजबूत करना है। अपने बचाव के लिए जी-जान से लड़ना है और शत्रु को हर मोर्चे पर परास्त कर देना है।"

"मगर हम लोग गरीब हैं, हम लोग कर ही क्या सकते हैं?"

विद्यार्थी बोला, "कोई बहुत बड़ी रकम नहीं चाहिये। जरा ध्यान दो, हमारा देश अपने बचाव के लिए अब तक हर रोज सिर्फ डेढ़ करोड़ रुपये खर्च करता रहा है। इस हिसाब से एक आदमी के हिस्से में सिर्फ एक आना आता है, क्योंकि हम चालीस करोड़ हैं। सिर्फ एक आना रोज हर रोज हम अपने बचाव पर खर्च करते हैं जो बहुत कम है। अब हमें अपने बचाव के लिए तीन करोड़ रुपये हर रोज खर्च करने पड़ेंगे। इस हिसाब से एक हिन्दुस्तानी के हिस्से में सिर्फ दो आने आते हैं, सिर्फ

[इ]स्तानी रहें। अपना जेब काटने का धन्धा तो चलता रहेगा। फिर न क्यों पॉकेट में एक पैसा भी दें!"

सब लोग खामोशी से उसकी तरफ़ देखने लगे। अचानक महादेव [अप]ना चौड़ा सीना फुलाता हुआ आगे बढ़कर उसके सामने जा खड़ा [हो ग]या और उसकी ओर कड़ी निगाह से देखते हुए बोला, "फिर बोल, [क्य]ा बोला तूने!"

"हाँ, हाँ, बोलता है, बोलता है।" शामू गिरहकट बड़े दृढ़ स्वर में [बो]ला, "हम किसी से डरता नहीं है। हम बोलता है, हम एक पैसा नहीं [दे]गा, एक पाई नहीं देगा।"

बिजली की सी तेजी से महादेव का हाथ ऊपर उठा और शामू के [च]ेहरे पर एक हथौड़े की तरह जा गिरा। शामू के होठों से खून [नि]कलने लगा। उसके चेहरे पर गुस्से की एक तेज लहर आयी और उसने फौरन अपनी जेब से चाकू निकाल लिया। महादेव सीना तानकर उसके सामने खड़ा हो गया और उसी क्षण उसके साथ दस-बारह आदमी मुक्के ताने चारों ओर खड़े हो गये।

उन सबको अपने चारों तरफ इकट्ठा देखकर शामू का स्वर बदल गया। उसने चाकू अपनी जेब में डाल दिया और हँसकर बोला, "अरे यार, मजाक करता था हम तो।" वह अपने होठों से खून साफ करते हुए बोला, "तुम सब समझ लिया, तुम भी क्या वंडलबाज आदमी है, महादेव! मजाक नहीं समझता है!" खून पोंछते हुए शामू गिरहकट वापस अपनी जगह पर चला गया। दूसरे लोग भी बिखरकर अपनी-अपनी जगहों पर चले गये।

० ० ०

सूरदास ने कसम खायी थी कि वह एक महीने के अन्दर अपनी मेहनत की कमाई से एक सौ रुपये जमा करके नागरिक कमेटी को देगा।

यह बहुत ही मुश्किल काम था क्योंकि अब तक उनकी कमाई
ही होती थी जिसे वे दो वक्त खा-पीकर काले पुल के नीचे
सकें। इसलिए सौ रुपये का जमा करना कोई आसान
सूरदास के लिए।

इस काम को पूरा करने के लिए सूरदास ने सुबह अ
बजाय सुबह छः बजे ही से बाहर निकलना शुरू कर दिया। उ
भी दस-ग्यारह बजे तक अपने काम में लगा रहता। उन दो
कर लालबाग, परेल, शिवाजी पार्क, माहिम, बाँद्रे और खा
में नयी-नयी गलियाँ ढूँढीं और नये-नये ग्राहक हरि-भजन
और अचानक सूरदास को मालूम हुआ कि यह खुद केवल
गानेवाला नहीं है बल्कि एक कवि भी है जो देशभक्ति
बनाकर उन्हें गा सकता है। इस खोज से उसे ऐसी प्रसन्
उसे आँखें मिल गयी हों।

जब महीने में ग्यारह दिन गुजर गये तो सूरदास ने
सोचा और फिर उस दिन से बीड़ी पीना भी बंद कर दिया
के इक्कीस दिन गुजर गये तो उसने हिसाब करके देखा,
नब्बे नये पैसे जमा हो गये थे।

सूरदास ने परेशान होकर अपने बेटे से कहा, "म
हुए!"

"हो जायेंगे बापू, अभी तो दस दिन बाकी हैं

महादेव ने रेजगारी का ढेर एक हथेली में जमा कि
के हवाले किया। सूरदास ने हथेली को दो तीन बार
तौला, फिर महादेव को देकर बोला, "यह सिकी इ
दस ले जा और उसको बोल यह पूरा ले ले और उसके
दाने के नोट दे दे।"

महादेव बोला, "ईरानी से डबलरोटी भी लेता आऊँ ?"

"अपने लिए ले आना, मेरे लिए मत लाना," सूरदास ने जवाब दिया।

"तेरे लिए क्यों नहीं, बापू ?"

"आज से एक टाइम खाना खाऊँगा।"

"बापू !" महादेव ने आश्चर्य से चिल्लाकर कहा।

"बोल दिया न, जा, किट-किट न कर !" सूरदास ने आदेश भरे स्वर से ऐसी सख्ती से कहा कि महादेव चुपचाप वहाँ से चला गया।

जिस दिन महीने की आखिरी रात थी उस रात काले पुल का हर वासी अपनी-अपनी जगह पर बैठा हुआ अपनी जमा-पूँजी गिन रहा था और गिनकर अपनी पोटली में बाँध रहा था। आज उन सबके चेहरे पर खुशी की चमक थी क्योंकि अपनी भूख से अलग-अलग बँधे रहते हुए भी आज उनमें से हर आदमी यह महसूस कर रहा था कि एक-दूसरे से अलग होने के बावजूद कोई चीज उन सब में ऐसी भी है जो उन्हें जोड़ती है, इकट्ठा करती है, एक कर देती है। पैसे गिनते-गिनते उन्हें लगने लगा कि जैसे सौ नये पैसे अलग-अलग हैं मगर सब मिलकर एक रुपया होते हैं। इसलिए, हर आदमी जो अपनी-अपनी मुसीबत में फँसा हुआ था, आज एक नयी निगाह से अपने पड़ोसी को देख रहा था, जैसे उसका और अपना कोई बहुत गहरा और प्यारा रिश्ता हो।

फजलू बूट पालिशवाले ने अपनी रकम गिनकर बड़े गर्व से कहा, "अपने पास भी आज सत्तरह रुपये आठ नये पैसे हो गये हैं, तुमने कितने जमा किये हैं ?" उसने भोलू डबलरोटीवाले से पूछा।

"पूरे ग्यारह रुपये।" भोलू डबलरोटीवाले ने अपनी पोटली हिलाते हुए कहा, फिर उसने रामू गिरहकट से पूछा, "तुम्हारे कितने हुए ?"

"अरे, क्या पूछते हो ! अपना धन्धा बहुत मन्दा है आजकल। जो

ारो उसमें से मैदानल ढ़िरंग बांद निकलता है।" ग्रामू गिरहकट
निगशा से तीन बटुए खोलकर मोटू डबलरोटीवाले के सामने
दे और बोला, "यकीन न आये तो खुद देख लो।"
मू चमार हँसकर बोला, "अबे, हराम का धन्धा करेगा तो
लेगा।"
हादेव अपनी जगह पर सिक्कों की ढेरियाँ बनाते हुए गिन रहा
जब वह सब रकम मिलाकर जोड़ चुका तो सूरदास ने बड़ी बेचैनी
ा, "कितना हुआ?"
"सौ रुपये चार आने।"
"ठीक से गिन।"
"ठीक से गिन लिया।"
"इधर ला।"
महादेव ने पूरी सौ की रकम सूरदास के हाथ में थमा दी।
"वह चवन्नी किधर है?"
महादेव चुप रहा।
सूरदास ने फिर बड़ी सख्ती से पूछा, "वह चवन्नी किधर है? मैं
छता हूँ, बता?"
महादेव चुप रहा तो बुड्ढे ने एक जोर का चाँटा उसके मुँह पर
दिया। सब लोग आश्चर्य से बाप-बेटे की ओर देखने लगे। मगर चाँटा
खाकर महादेव खफा नहीं हुआ। धीरे-धीरे मुस्कराने लगा, फिर उसने
अपनी जेब में हाथ डालकर उसे टटोला और जेब से कुछ निकालकर
उसने उसे बुड्ढे की गोद में फेंक दिया और बोला, "चवन्नी की बीड़ी
लाया हूँ तेरे लिए।"
"तो पहले क्यों नहीं बोला, चाँटा क्यों खाया?" बुड्ढे की सख्त
आवाज में एक अजीब तरह की कोमलता और पश्चात्ताप था।

"तेरा चाँटा खाने को कभी-कभी जी चाहता है।" महादेव ने रे से कहा।

बुड्ढे ने काँपते हुए हाथों से बीड़ी सुलगाई, जोर का एक कश ग्या, आँखें बन्द करके सर मेहराब की काली दीवार से लगा दिया और धुआँ छोड़ते हुए खोये-खोये स्वर में बोला, "हाँ, स्वर्ग का झोंका आ गया।"

रात को सब सो गये मगर सूरदास को नींद नहीं आयी। वह पलट-पलटकर करवटें लेता रहा और जागता रहा।

"सो जाओ, बापू!" महादेव ने कहा।

"नींद नहीं आ रही है, बेटा।"

"क्या सोच रहे हो!"

"सोच रहा हूँ, बेटा कब रात खत्म होगी, कब सुबह होगी, कब हम लोग जुलूस बनाकर नागरिक कमेटी के पास जायेंगे और अपना रुपया देश की रक्षा के लिए जमा करायेंगे।"

महादेव चुप रहा।

"ऐसा लगता है, बेटे, जैसे यह दुनिया बदल सकती है।"

महादेव फिर चुप रहा।

अचानक काले पुल के ऊपर एक गरज-सी सुनाई दी जो धीरे-धीरे दूर होती गयी। सूरदास अपनी जगह से उठा और काले पुल की मेहराब से टेक लगाकर खड़ा हो गया और अपनी अंधी आँखें ऊपर उठाकर दूर ऊपर आकाश को देखने लगा।

"यह गरज कैसी थी, बेटा!"

"हवाई जहाज था।"

सूरदास के चेहरे पर एक अजीब-सी चमक आयी। उसने अपनी अंधी आँखों से आकाश को घूरते कहा, "इसमें हमारे जवान होंगे,

सीनें पर आ रहे हैं, अपने देश की रक्षा के लिए।"

महादेव भी बड़ी एकाग्रता से ऊपर देख रहा था, अचानक धीरे से बोला, "बहुत जी चाहता है मैं भी ऊपर उड़ जाऊँ इन लोगों के साथ।"

अचानक एक और हवाई जहाज आया और पुल के ऊपर शोर मचाता हुआ हवा में गुजर गया। फिर दूसरा आया, फिर तीसरा आया, चौथा आया, पाँचवाँ आया। उन तेज चलनेवाले हवाई जहाजों की नाक आकाश का सीना चीरती हुई चली गयी और सारी हवा में तूफानी लहर पैदा हो गयीं और कानों में बादलों की सी घन-गरज और गूँज पैदा होती गयी और काले पुल की दीवार से लगे-लगे बुड्ढे सूरदास ने महसूस किया जैसे उन बिजली की-सी रफ्तारवाले हवाई जहाजों की धमक से काले पुल की दीवारें काँप उठी और काले पलस्तर की मिट्टी उखड़-उखड़कर उसके चेहरे पर गिर रही है और खुशी से उसने चिल्लाकर कहा, "काला पुल हिल रहा है, महादेव, काला पुल हिल रहा है।"

० ० ०

सुबह सवेरे विद्यार्थी सबसे पहले उठा। उसने सब लोगों को इकट्ठा किया और उन्हें बताया कि उनके जुलूस के लिए क्लेयर रोड की कमेटी ने एक बैंड दिया है, थोड़ी देर में बैंड यहाँ पहुँच जायेगा। सब लोग तैयार हो जायें और अपनी-अपनी पोटलियाँ सँभाल लें।

फिर वह कागज और कलम लेकर बैठ गया और बोला, "सब लोग अपना-अपना नाम और रकम बोलते जायें। मैं सूची बना लेता हूँ।"

भोलू रोटीवाले ने आगे बढ़कर कहा, "ग्यारह रुपये मेरे लिख लो।"

मुहम्मददीन मिस्त्री बोला, "सैंतालीस रुपये पचास नये पैसे मेरे लिख लो।"

फजलू बूट पालिश वाला बोला, "सत्तरह रुपये आठ नये पैसे मेरे।"

गुरुबचनसिंह बोला, "चालीस रुपये मेरे।"

सूरदास जोर से चिल्लाया, "सौ रुपया, पूरा एक सौ रुपया मेरा।"

सूरदास ने इतना कहकर जेब में हाथ डाला तो उसने घबराकर इधर-उधर अच्छी तरह से टटोलना शुरू किया और अपने-आप कहने लगा, "···किधर···किधर है!—इसी जेब में रखा था रात को···यहीं रखा था।"—यह अचानक चीख कर बोला, "किसी ने रात को मेरी जेब काट ली।"

इतना कहकर उसने अचानक सारे मजमे को घूरा और सारे मजमे की निगाहें रामू गिरहकट को ढूँढ़ने लगीं। मगर रामू गिरहकट कहीं नजर नहीं आया। रात को तो इसी पुल के नीचे सो रहा था, सबने उसे देखा था। मगर सुबह सवेरे किस वक्त वह गायब हो गया, किसी को मालूम न था। महादेव का खून गुस्से से खौलने लगा मगर सूरदास बिल्कुल बेबस होकर बच्चों की तरह सिसकने लगा।

"मेरे सौ रुपये! सौ रुपये!" उसने रोते-रोते कहा, "सौ रुपये जो मैं नागरिक कमेटी को देनेवाला था, मेरी महीने भर की दिन रात की मेहनत की कमाई।"

महादेव ने दाँत पीसकर कहा, "वह रामू इस वक्त मुझे कहीं अगर मिल जाये···"

वे सब लोग सूरदास को तसल्ली देने लगे।

मोटू बोला, "भागकर जायेगा कहाँ? इस शहर में कहीं तो मिलेगा। हम उसे ढूँढ निकालेंगे।"

रामू चमार बोला, "हम सब उसे जानते हैं। हम उसे तलाश कर लेंगे और तुम्हारी एक एक पाई उससे वसूल कर लेंगे।"

पास ही खड़े पालिश वाले ने घूँसा तान कर कहा, "मैं उस सुअर की औलाद के सौ टुकड़े कर दूँगा। सूरदास, तुम्हारा रुपया मैं ढूँढ़कर

ा, रो नहीं, सूरदास !"

तने में क्लेयर रोड कमेटी का बैंड आ गया और काले पुल के जुलूस बनाकर विदा होने लगे। सबसे आगे विद्यार्थी राष्ट्रीय झंडा ले रहा था, फिर एक-एक करके सब लोग उस काले पुल की से निकलकर रोशनी में जाते हुए जुलूस में शामिल होते गये। और रामू और फजलू और गुरबचन और जार्ज और निक्सर और और कमलाकर, मँगता और जुगता सभी जुलूस में गीत गाते हुए ये।

ुराब के नीचे सूरदास सिसकता हुआ रह गया। महादेव र में मुट्ठियाँ भींचता हुआ मेहराब की दीवार को घूरने गा।

चानक सूरदास सिसकते सिसकते चुप हो गया। महादेव पुल की हो मारने-मारते रुक गया और अपने बाप की तरफ देखने लगा। धीरे से अपने आँसू पोंछने लगा। उदास चेहरे पर एक रोशन ट आ गयी और वह जल्दी से अपनी जगह से उठ खड़ा हुआ थों से टटोल टटोलकर बोला, "महादेव! महादेव! कहाँ हो

हाँ—तुम्हारे पास हूँ, बापू।" महादेव सूरदास के करीब चला

देव का हाथ पकड़कर सूरदास बड़ी बेचैनी से बोला, "मुझे स से ले चलो।"

जुलूस में जाकर क्या करोगे!" महादेव ने बड़ी निराशा से हारे पास देने के लिए है क्या!"

कुछ नहीं है, फिर भी है, तुम मुझे जल्दी से ले चलो।"

सुनकर क्या होगा तुम्हें।" महादेव ने बूढ़े सूरदास को

सन्देह की दृष्टि से घूरते हुए कहा।

"हाँ, हाँ!" बुड्ढा अब मुस्कराकर बोला, "हाँ, बहुत छुपाकर रखा है, सबकी नजरों से छुपाकर रखा है। कहीं दिल के करीब", सूरदास ने अपने जोगिये चोगे के अन्दर इशारा किया, "मगर तुम अब देर मत करो, महादेव! मुझे जल्दी से ले चलो।"

महादेव ने निराशा से सर हिलाकर कहा, "मालूम होता है बुढ़ापे ने सठिया दिया है।"

o o o

नागरिक कमेटी का जलसा शुरू हो चुका था जब महादेव अपने बुड्ढे बाप को लेकर वहाँ पहुँचा।...स्टेज पर एक अध्यक्ष बैठा था और एक माइक पर विद्यार्थी वाले पुल के नीचे रहनेवाले नागरिकों की रकमें और नाम एक सूची से पढ़-पढ़कर सुना रहा था और स्टेज के सामने बैठे हुए गली, मुहल्लेवाले मर्द और औरतें और बच्चे सब मिलकर जोर जोर से तालियाँ बजा रहे थे। विद्यार्थी वाले पुल के एक एक आदमी को बारी-बारी से स्टेज पर बुलाकर उसका परिचय कराता था और उसकी रकम का एलान करता था। फिर सब लोग जोर जोर से तालियाँ बजाते थे और रकम देनेवाला मुस्कराता हुआ हाथ जोड़कर आगे चला जाता था और दूसरा उसकी जगह आ जाता था। यही प्रोग्राम चल रहा था।

अपने साथियों के नाम सुन-सुनकर बुड्ढे सूरदास के कदम जोशों से उठने लगे। वह महादेव को भीड़ में आगे धकेलता हुआ बोला, "जल्दी चलो, जल्दी चलो, मुझे स्टेज पर ले चलो।"

"ले तो जा रहा हूँ," महादेव ने बुरा गुस्से से कहा, "ऐसी जल्दी भी क्या है, कौन कुबेर का धन नागरिक कमेटी को देने वाले हो।"

"चलो, चलो, आगे बढ़ो, बातें न करो!" बुड्ढा सूरदास गुस्से से चिल्लाया और महादेव भीड़ को चीरते हुए अपने बुड्ढे बाप को स्टेज की ओर ले जाने लगा।

स्टेज पर विद्यार्थी कह रहा था, "यह मोन्टू डबलरोटी वाला है, इसने डिफेन्स फण्ड में ग्यारह रुपये दिये हैं।"

"यह मुहम्मददीन मिस्त्री है, इसने सैंतालीस रुपये पचास नये पैसे दिये हैं।"

"यह फजल बूटपालिश वाला, सत्तरह रुपये आठ नये पैसे।"

"यह गुरबचनसिंह, चालीस रुपये।"

"यह जुगता रद्दीवाला, यह तेरह रुपये आठ आने दे रहा है।"

"यह मँगता, इसकी बीवी, यह सात रुपये नौ आने दे रही है।"

विद्यार्थी सूची से नाम पुकारता गया, लोग स्टेज पर आते गये और अपनी रकम अध्यक्ष महोदय के हवाले करके स्टेज से विदा होते रहे और तालियों का शोर चलता रहा। जब सूची खत्म हो गई तो विद्यार्थी ने माइक पर चिल्लाकर सभा में उपस्थित लोगों से फण्ड के लिए अपील की।

"सब दो! सब दो! अपने देश की रक्षा के लिए धन दो, सोना दो, खून दो, दिल खोलकर दो, जो कुछ तुम्हारे पास है वह दो, दस लाख दो, दस हजार दो, दस रुपये दो, एक रुपया दो, एक नया पैसा दो, जो दे सकते हो दे दो! याद रखो, देश के जवान सरहदी मोर्चे पर अपना खून दे रहे हैं, तुम क्या दे रहे हो? तुम क्या दे रहे हो?"

विद्यार्थी का रुदन हवा में चारों ओर गूँज गया।

महादेव, सूरदास को लेकर स्टेज पर पहुँच चुका था।

विद्यार्थी ने फिर चिल्लाकर पूछा, "देश के जवान मोर्चे पर अपना

रहन रहे हैं, तुम क्या दे रहे हो ?"

"मैं अपना बेटा दे रहा हूँ !" बुड्ढे सूरदास ने कहा।

अचानक चारों ओर सन्नाटा छा गया। किसी को ताली पीटना याद न रहा। सब आश्चर्य से बुड्ढे सूरदास की ओर देखने लगे जो रुँधे स्वर से कह रहा था, "मैं अन्धा हूँ और मेरे पास बेटे के सिवा कुछ भी नहीं है आज। और आज जो कुछ मेरे पास है वह अपने देश को भेंट करता हूँ।"

"नागरिक कमेटी मेरे बेटे को ले ले और उसे फौज में भरती करा दे।"

अचानक महादेव ने आश्चर्य में कहा, "बापू !"

अन्धे सूरदास ने अचानक पलटकर बड़ी सख्ती से अपने बेटे का हाथ पकड़ लिया और बोला, "क्या तू फौज में भरती नहीं होगा !"

"मैं !..." महादेव के होंठ काँपने लगे। "...मैं तो पहले दिन ही भरती होनेवाला था बापू, मगर तेरे कारन चुप था। सोचा, मेरे बाद तुझको कौन सँभालेगा। मेरी माँ भी मर चुकी है, वह जिन्दा होती तो मेरे पीछे तेरी देख-भाल कर लेती, मगर माँ तो मर चुकी है।"

अचानक सूरदास ने गरजकर कहा, "कौन कहता है तेरी माँ मर चुकी है ? वह तो जिन्दा है और सरहद पर खड़ी तेरी राह देख रही है। जा—अगर तू अपनी माँ का सच्चा बेटा है तो जा और जाकर उसकी रक्षा कर।"

विद्यार्थी ने कहा, "सूरदासजी, सोच लो। एक बार फिर सोच लो, तुम अन्धे हो और महादेव तुम्हारी लाठी है।"

"अब यह लाठी दुश्मनों पर बरसेगी और उन्हें हर मोर्चे से मार भगायेगी।" सूरदास ने गर्व से कहा, फिर वह अपने बेटे के कन्धे पर हाथ रखकर बोला, "जा, मेरे बेटे, तेरी माँ तुझे बुला रही है।"

महादेव का चेहरा खुशी से चमक उठा। वह धीरे से झु
अपने बाप के पाँव छूकर उससे गले मिलने लगा। बुड्ढा सूरद
रोते अपने बच्चे का चेहरा टटोल रहा था।

अचानक बहुत-से लोगों की आँखों में आँसू आ गये और
लोग अचानक अपनी जगह से उठकर जन गन मन गाने लगे!